

ओ३म्

ओ३म्

सारस्वत ग्रंथमाला का प्रथम पुष्प

स्वास्थ्य शिक्षा

लेखक

दयाशंकर पाठक मेडेलिस्ट,
जयपुर

...थम बार १०००] १९२५ [मूल्य ।)



श्रीमान् डाक्टर भोलानाथ जी साहब एल्० एम्० एस्० ।



समर्पण

पूज्यवर श्रीयुत् डाक्टर भोलानाथजी
साहिब एल० एम० एस० के चरण
कमलो में उनके उच्च विचारो
और उदार भावों के निमित्त
यह तुच्छ कृति मैं सादर
समर्पित करता हूँ। प्रेम
पूर्वक ग्रहण कर
कृतार्थ करे।

—लेखक



विषय सूची

निवेदन

प्रिय पाठक प्रवर ! प्रस्तुत पुस्तक लेकर आपके सम्मुख उपस्थित होता हूँ आशा है पढ़कर प्रसन्नता प्राप्त करेंगे । कुछ समय पूर्व जब श्रीमान् प्रो० राममूर्ति जी का जयपुर शुभागमन हुआ और मुझे दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उस समय से आपके सुललित सुन्दर स्वास्थ्य सम्बन्धी उपदेशों को श्रवण कर मेरे हृदय में विचार उत्पन्न हुआ है कि यदि मैं भी कोई स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तक की रचना करूँ तो अति उत्तम हो। पुस्तक में जिन जिन महत्वपूर्ण तथा गूढ़ातिगूढ़ विविध विषयों का दिग्दर्शन कराने की चेष्टा की गई है वे नीरस हैं या सरस, लाभदायक या हानिकारक इन सब बातों का निर्णय पाठकों की रुचि पर निर्भर है। पुस्तक में स्वानुभूत विषयों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों से भी यत्र तत्र सहायता ली गई है, अत उनके सहृदय लेखकों से क्षमा प्रार्थी हूँ। अन्त में मैं श्रीमान् प्रो० राम मूर्ति 'कलियुग भीम' का हृदय से कृतज्ञ हूँ कि जिन्होंने पुस्तक की भूमिका लिखने की कृपा की। पुस्तक को स्थानाभाव के कारण वृथा आडम्बरों से बचा सर्व प्रकार से संक्षिप्त बनाने का प्रयत्न किया गया है वरना पुस्तक में प्रस्तुत प्रत्येक विषय पर एक एक पुस्तक लिखी जा सकती थी। यदि किसी ने भी पुस्तक को मनन पूर्वक अद्योपान्त आध्ययन कर एक भी स्वास्थ्य प्रदायक नियम का पालन किया तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

निवेदक —

दयाशङ्कर पाठक मेडेलिस्ट।

निवेदन

प्रिय पाठक प्रवर ! प्रस्तुत पुस्तक लेकर आपके सम्मुख उपस्थित होता हूँ आशा है पढकर प्रसन्नता प्राप्त करेंगे । कुछ समय पूर्व अब श्रीमान् प्रो० राममूर्ति जी का जयपुर शुभागमन हुआ और मुझे दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उस समय से आपके सुललित सुन्दर स्वास्थ्य सम्बन्धी उपदेशों को श्रवण कर मेरे हृदय में विचार उत्पन्न हुआ है कि यदि मैं भी कोई स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तक की रचना करूँ तो अति उत्तम हो। पुस्तक में जिन जिन महत्वपूर्ण तथा गूढ़ातिगढ़ विविध विषयों का दिग्दर्शन कराने की चेष्टा की गई हैं वे नीरस हैं या सरस, लाभदायक या हानिकारक इन सब बातों का निर्णय पाठकों की रुचि पर निर्भर है। पुस्तक में स्वानुभूत विषयों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों से भी यत्र तत्र सहायता ली गई है, अत: उनके सहृदय लेखकों से क्षमा प्रार्थी हूँ । अन्त में मैं श्रीमान् प्रो० राम-मूर्ति 'कलियुग भीम' का हृदय से कृतज्ञ हूँ कि जिन्होंने पुस्तक की भूमिका लिखने की कृपा की। पुस्तक को स्थानाभाव के कारण वृथा आडम्बरों से यथा सर्व प्रकार से संक्षिप्त बनाने का प्रयत्न किया गया है वरना पुस्तक में प्रस्तुत प्रत्येक विषय पर एक एक पुस्तक लिखी जा सकती थी। यदि किसी ने भी पुस्तक को मनन पूर्वक आद्योपान्त अध्ययन कर एक भी स्वास्थ्य प्रदायक नियम का पालन किया तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा ।

निवेदक —

दयाशङ्कर पाठक मेडेलिस्ट ।

भूमिका



पाठक प्रवर ! यह बात प्रकाश करते हुये प्रसन्नता प्राप्त होती है कि मुझे ऐसे विषय की पुस्तक की भूमिका लिखने के लिये कहा गया है कि जिससे मुझे स्वाभाविक स्नेह है और जिसके व्यवहार तथा प्रचार में मैं अपनी अवस्था का विशेष भाग व्यतीत कर चुका हूँ।

× × ×

श्रीमान् श्रीराज सवाईमहाराजा मानसिंहजी जयपुराधीश के तिलकोत्सव पर जब मेरा जयपुर आना हुआ। उसी अवसर पर इस पुस्तक के रचयिता श्रीयुत दयाशङ्कर पाठक (शङ्कर मूर्ति) से मेरा परिचय हुआ। नवयुवा शङ्कर मूर्ति में मेरे व्यायाम सम्बन्धी खेलों से स्वभावतः विशेष श्रद्धा प्रेम तथा उत्साह दृष्टिगोचर हुआ। आपने कई एक विशेष नियमों का जिज्ञासु हो कर मुझ से तद् विषयिक रीति नीति की पूछ ताछ की।

× × ×

' होनहार बिरवान के होत चीकने पात '

इस उक्ति को चरितार्थ करते हुये आपने व्यायाम सम्बन्धी विषय को हृदयङ्गम करने में विशेष प्रयत्न किया है और परमात्मा की कृपा से उसी में भली भाँति योग्यता प्राप्त की है जिसका प्रतिफल स्वरूप यह "स्वास्थ्य शिक्षा" नामक पुस्तक

पुस्तक पर सम्मतियाँ ।

कलियुग के भीम जगद्विख्यात प्रो० राममूर्ति लिखते हैं:—

इस पुस्तक में लेखक ने प्राचीन भारतीय व्यायाम शिक्षा पद्धति का महत्व दिखाते हुये आधुनिक पाश्चात्य प्रणाली की त्रुटियों का दिग्दर्शन कराया है और उसकी पुष्टि में प्रमाण स्वरूप संसार के जगद्विख्यात मल्लविद्या विशारदों का भारतीय पहलवानों के साथ तुलनात्मक वर्णन किया है जिससे लेखक का सिद्धान्त स्पष्ट हो जाता है

× × ×

आरोग्यता के लिये मनुष्य की नैतिक दिनचर्या, आहारविहार, व्यायाम प्राणायाम, ब्रह्मचर्य, भक्ष्याभक्ष्य, पथ्यापथ्य तथा अन्य आवश्यक उपयोगी विषयों का बड़ी योग्यता के साथ समावेश किया गया है।

प० रघुनन्दनप्रसाद एम० ए०, डी० ए० वी० हाई स्कूल अलीगढ़ से लिखते हैं —

प्राचीन आर्य लोगों की व्यायाम पद्धति से मनुष्य कैसे कितना बलवान् हो सकता है यह बात इस पुस्तक में दिखाई गई है। निःसन्देह पुस्तक बड़े काम की है। स्वस्थ रहने के लिये व्यवहार में लाने योग्य बातों का बड़ी सरलता पूर्वक वर्णन किया गया है। भाषा मनोहर है व छपाई सुन्दर है। पुस्तक हर एक विद्यार्थी व नवयुवक को अवश्य पढ़नी चाहिये। आशा की जा सकती है कि इस पुस्तक में लिखित विषयों का सम्यक् ज्ञान होने पर डाक्टर

आप सज्जनों के सामने प्रस्तुत है। इस पुस्तक में लेखक ने प्राचीन भारतीय व्यायाम शिक्षा पद्धति का महत्व दिखाते हुये आधुनिक पाश्चात्य प्रणाली की त्रुटियों का दिग्दर्शन कराया है और उसकी पुष्टि में प्रमाण स्वरूप संसार के जगत् विख्यात मल्ल विद्या विशारदों का भारतीय पहलवानों के साथ तुलनात्मक वर्णन किया है जिससे लेखक का सिद्धान्त स्पष्ट हो जाता है।

× × ×

आरोग्यता के लिये मनुष्य की नैतिक दिनचर्य्या, आहार विहार व्यायाम प्राणायाम, ब्रह्मचर्य, भक्ष्याभक्ष्य, पथ्यापथ्य तथा अन्य आवश्यक उपयोगी विषयों का बड़ी योग्यता के साथ समावेश किया गया है। यह पुस्तक सर्व साधारण को कितनी उपादेय है यह सहृदय पाठकों के पुस्तकावलोकन से ज्ञात होगा।

पुस्तक पर सम्मतियाँ।

कलियुग के भीम जगद्विख्यात प्रो० राममूर्ति लिखते हैं —

इस पुस्तक में लेखक ने प्राचीन भारतीय व्यायाम शिक्षा पद्धति का महत्व दिखाते हुये आधुनिक पाश्चात्य प्रणाली की त्रुटियों का दिग्दर्शन कराया है और उसकी पुष्टि में प्रमाण स्वरूप संसार के जगद्विख्यात मल्लविद्या विशारदों का भारतीय पहलवानों के साथ तुलनात्मक वर्णन किया है जिससे लेखक का सिद्धान्त स्पष्ट हो जाता है

× × ×

आरोग्यता के लिये मनुष्य की नैतिक दिनचर्या, आहारविहार, व्यायाम प्राणायाम, ब्रह्मचर्य, भक्ष्याभक्ष्य, पथ्यापथ्य तथा अन्य आवश्यक उपयोगी विषयों का बड़ी योग्यता के साथ समावेश किया गया है।

प० रघुनन्दनप्रसाद एम० ए०, डी० ए० वी० हाई स्कूल अली गढ़ से लिखते हैं:—

प्राचीन आर्य लोगों की व्यायाम पद्धति से मनुष्य कैसे कितना बलवान हो सकता है यह बात इस पुस्तक में दिखाई गई है। निःसन्देह पुस्तक बड़े काम की है। स्वस्थ रहने के लिये व्यवहार में लाने योग्य बातों का बड़ी सरलता पूर्वक वर्णन किया गया है। भाषा मनोहर है व छपाई सुन्दर है। पुस्तक हर एक विद्यार्थी व नवयुवक को अवश्य पढ़नी चाहिये। ... की जा सकती है कि इस पुस्तक में लिखित विषयों का ... होने ...

वैद्यों की अधिक आवश्यकता न रहेगी। अच्छा हो यदि हमारे आर्य स्कूल पुस्तक को पाठन क्रम में लेलें।

, बा० जगननारायन महरोत्रा बी० ए० हैडमास्टर डी० ए० वी० स्कूल गाजीपुर लिखते हैं:—

श्री मद्दयानन्द शताब्दी के अवसर पर इस पुस्तक का निकलना बड़ा हर्षोत्पादक है। सच पूछा जाय तो हमारी अधो गति का एक मात्र कारण शारीरिक अवनति ही है—प्रत्येक आर्य का प्रथम कर्तव्य है कि सब से पूर्व स्वस्थ रह कर बलवान् बने। स्वास्थ्य अच्छा रखने के लिये जितनी भी बातों के ज्ञान की आव श्यकता है वे सब बडी सरलता पूर्वक मनोहर भाषा में इस पुस्तक में समझा दी गई हैं। प्रत्येक नवयुवक विद्यार्थी आर्य सज्जनों का कर्तव्य है कि इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें व व्यायाम इत्यादि द्वारा प्राचीन आर्यो जैसे बलवान् होने का प्रयत्न करें।

प० हरिप्रसाद शर्मा बी० ए० हैडमास्टर ब्राह्मण स्कूल आगरा लिखते हैं:—

डाक्टर व वैद्यों में कुछ नहीं रखा—दवाइयों में धन खर्च करना बिल्कुल व्यर्थ है। स्वास्थ्य प्राकृतिक नियमों के पालन करने ही से मिलता है इस प्राचीन आर्य सिद्धान्त के अनुसार यदि कोई जानना चाहता है कि वे नियम कौन से हैं जिनका पालन करने से हम कभी बीमार नहीं पड़ेंगे तो इस पुस्तक को अवश्य पढ़े। प्राचीन व अर्वाचीन पूर्वीय तथा पाश्चात्य शरीर विज्ञान सम्ब न्धी सभी जानने योग्य बातों का समावेश किया गया है। पुस्तक ५ बड़ी उपयोगी है। भाषा ललित तथा छपाई सुन्दर है।

स्वास्थ्य शिक्षा

आरोग्यता

The greatest blessing on the earth is health,
The wisest proverb says, 'health is wealth
A king who is ill is poor with all his wealth,
The poorest cooly rich if in good health.

—*Dr K P*

अर्थात्—संसार में सर्वोत्तम वस्तु स्वास्थ्य ही है। सर्व वसुधा सम्पन्न होते हुये पीड़ा ग्रसित एक सम्राट दीन है किन्तु एक दीन पुरुष जिसका कि स्वास्थ्य परिपूर्ण है धनवान है।

तथा

धर्मार्थकाममोक्षाणां, आरोग्यंमूलमुत्तमम्।

अर्थात्—धर्म अर्थ काम मोक्षादि का मूल मन्त्र आरोग्यता ही है।



रोग्यता का मनुष्य जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध है अथवा यों कहिये कि आरोग्यता मनुष्य जीवन का मूल है जो स्वर्गीय सुख के समान सर्वदा सुखदायक है। प्रत्येक मनुष्य अपनी आयु घटाने बढ़ाने में स्वतंत्र है, चाहे वह अपने दुष्कर्मों द्वारा कराल काल का कवल बन जाय और चाहे आरोग्यवर्द्धक नियमों का पालन कर दीर्घ जीवन

mankind, there is no friend like activity, finding which no body ever sustains a loss. अर्थात् आलस्य जीवन का शत्रु है और चैतन्यता के समान मनुष्य जीवन का कोई सहायक नहीं है। सरांश यह है कि जो मनुष्य प्राणभूत शक्तियों का प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध व्यवहार करता है उसकी सम्पूर्ण शारीरिक शक्तियाँ शीघ्र ही पराभव होने लगती हैं और उसको महिमान मानव मंडल में मान मर्दन तथा अनेकों आपदाओं का सामना करना पड़ता है। शरीर रुग्ण रहने से ससार दु:खमय और आरोग्य रहने से सुखमय प्रतीत होता है अत मनुष्यों का कर्त्तव्य है कि वह प्राकृतिक नियमानुसार चल कर सम्पूर्ण स्वास्थ्य का उपभोग करें। भोजन, वायु, व्यायाम आदि स्वास्थ्य सम्बन्धी मार्मिक सिद्धान्तों पर दृष्टि पात न करने ही के कारण हमारी शक्तियाँ निर्बल होती जा रही हैं। अस्तु हम उन्हीं विषयों का क्रमश: उल्लेख करते हैं। जब हम प्राचीन और आधुनिक काल म पारस्परिक दशा की तुलना करते हैं तो यह कहे बिना कदापि नहीं रहा जाता कि जनता के आरोग्य और सुख के प्राकृतिक स्वाभाविक मार्ग से भटक कर कृत्रिमता के पथ पर पदार्पण करने ही के कारण आज सकल शोक-रोग आदि नाना प्रकार की व्याधियों से आक्रान्त होती दिखाई पड़ती है। हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम जीवन को सुखी बनाने और निरोग रहने के लिये सीधे-सादे प्राकृतिक मार्ग ग्रहण करें।

प्राकृतिक मनुष्य दिनचर्य्या

यदि अपना कल्याण आप हैं चाहते,
दीर्घ आयु सुख स्वास्थ्य पूर्ण यदि इष्ट है ;
तो स्वाभाविकता से नाता जोड़िये,
चलिये प्रकृति प्रदर्शित सुखों के मार्ग पर ॥

—स्वाभाविक जीवन।



प्रत्येक मनुष्य के लिये अपना स्वास्थ्य सुरक्षित रखने की इच्छा और प्रयत्न करना केवल परमावश्यक ही नहीं है वरन् स्वाभाविक नियम है। किन्तु वर्तमान काल में रोगों और रोगियों की संख्या प्रति दिन अधिक होती ही जाती है। वास्तव में शरीर स्वयं कभी रोगी नहीं होता वरन् शरीर में प्रथम ही से नाना प्रकार के अनिष्टकारी पदार्थो का स्वयं ही साम्राज्य स्थापित रहता है और दूसरे हम मूर्खतावश आहार-विहार, कुपथ्यादि द्वारा उनकी और भी सहायता करते हैं। प्रथम तो शरीर ही यथासाध्य किसी हानिकारक वस्तु को अन्दर आने नहीं देता क्योंकि साँस, पसीना, मल, मूत्रादि रूप में भिन्न भिन्न मार्गों द्वारा प्रतिक्षण विकार निकलते ही रहते हैं। अस्तु हमें उचित है कि हम उन

पदार्थों का उपयोग न करें कि जिनका प्रभाव सहन करने में हमारी शारीरिक इन्द्रियों को वृथा अपनी शक्ति न खोनी पड़े। किंचित्, अस्वाभाविक आपत् की आकांक्षा होते ही हमारे शारीरिक स्नायु समूह तुरन्त भय सूचक संकेत कर देते हैं और उनके प्रतिकार हितार्थ साधन भी बतला देते हैं। यथा अत्याधिक सर्दी गर्मी का अनुभव हमें त्वचा से ज्ञात होता है और वस्त्रों की आवश्यकता प्रतीत होती है, अथवा कोई तिनका आदि आँखों के पास आते ही आँखें स्वयं बन्द हो जाती हैं। प्रथम तो शरीर अवयव ही यथाशक्ति स्वयं अपनी रक्षा आप कर लेते हैं असमर्थ होने पर हमें सूचना दे देते हैं। उस समय हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनकी रक्षा प्राकृतिक साधनों द्वारा करें न कि उनको वृथा मादक औषधियों से और भी शक्तिहीन बना दें। सत्य है Health is more easily lost than gained निस्सन्देह मनुष्य बिना औषधि अनुपान के दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है। किन्तु आज कल के मनुष्यों की यही धारणा है कि हम पेटैण्ट दवाओं के पान किये बिना कदापि शक्तिशाली नहीं हो सकते। यद्यपि आज कल प्रत्येक समाचार-पत्रों तथा प्रत्येक शहरों की दीवारों पर बड़े बड़े दिलचस्प मन मोदक दवाइयों के विज्ञापन दृष्टिगोचर होते हैं तथापि मनुष्य नाना प्रकार की जनपदनाशनी बीमारियों द्वारा अकाल काल के कवल ही होते आते हैं। विद्वानों का कथन है कि रोगों का शरीर में उत्पन्न होना प्राकृतिक नियम नहीं है। वरन् आरोग्य सम्बन्धी नियमों के विपरीत कार्य करने से ही जो शरीर में

विष मैल सञ्चित होता है और जब प्रकृति की उसको बाहर निकालने या शुद्ध करने का यत्न करते समय जो कष्ट अनुभव होता है उसी का नाम रोग उत्पन्न होना है। अब हमारा कर्तव्य है कि हम पूर्व से ही ऐसा यत्न करें कि मैल शरीर में सञ्चित ही न हो और हमारी इन्द्रियों को वृथा परिश्रम न करना पड़े।

जो मनुष्य पुरुषत्व प्राप्त करने के लिये प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन कर वृथा वीर्यस्तम्भन आदि विषैली हानिकारक औषधियों की भरमार करते हैं वह बिना विचारे स्वयं अपने पैर में कुल्हाड़ी मारते हैं क्योंकि विषयासक्त वस्तुयें कुछ समय तक तो अपना प्रभाव दिखाती हैं किन्तु अन्त में इनका परिणाम अत्यन्त हानिकारक दृष्टिगोचर होता है। यदि सत्य पूछिये तो आज कल कोई भी सच्चे पुरुषार्थ के असली मतलब को नहीं जानते हैं। क्या पुरुषत्व स्त्रीवर्ग के सम्मुख बतलाने के लिये है, या विषय भोग में अधिक समय तक लिप्त रहने का ही नाम सच्चा पुरुषार्थ है? साराश यह है कि आज सफल पुरुषत्व और वीर्य की दृढ़ता के विषय तरुण पुरुषों के मन में बड़े विलक्षण रूप में प्रविष्ट हो गये हैं। प्रथम तो तरुणता के जोशीले चढ़ते हुये रक्त में निर्बलता की सम्भावना ही कहाँ, दूसरे क्या यह निर्बलता औषधियों से दूर हो सकती है? सच तो यह है कि शारीरिक इन्द्रियों का उचित रीति से उपयोग न करने से जो मर्म स्थानों में पीड़ा अनुभव होती है उसी का नाम निर्बलता है। अशक्ति दूर हितार्थ प्रथम शरीरस्थ रोग का नाश करना उचित है क्योंकि अशक्ति या निर्बलता कोई रोग नहीं वरन्

रोग वाली स्थिति है प्रथम रोग का परिणाम है। ईश्वर ने शरीर शुद्ध हितार्थ स्वयं ही चार रास्ते नियत कर दिये हैं। प्रथम तो फैफड़े कि जिनके द्वारा रक्त आदि से सम्मिलित कार्बोनिक गैस भाप स्वरूप न निकलती रहती है। दूसरे त्वचा कि जिसके द्वारा पसीना निकलता है और रोम कूप द्वारा शुद्ध पवन प्रवेश कर रक्त को शुद्ध करती है। तीसरे गुदा और चौथे मूत्रेन्द्रिय कि जिनके द्वारा शरीर के अन्य मलीन पदार्थ बराबर निकलते रहते हैं। प्रथम तो मनुष्य को यही उचित है कि वह इन्हीं चार रास्तों द्वारा यथाशक्ति शरीर शुद्ध रखे और यदि रोग उत्पन्न भी हो जाय तो विषैली दवाइयो का उपयोग न कर प्राकृतिक विधियो से ही उसे मिटाने का उपाय करे। कारण दवाइयों से प्रथम रोग तो दब जाता है किन्तु उसकी मूल जड़ नष्ट नहीं होती और कुछ समय पश्चात् पुन कोई अन्य नवीन रूप धारण कर उत्पन्न हो जाता है। यथा डाक्टर पसीने के लिये "डाया फोरेटिक" का उपयोग करते हैं। इससे पसीना तो भली भाँति आता है परन्तु इच्छा गति मन्द पड़ जाती है क्योंकि जब प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध शारीरिक अवयवों को कार्य करना पड़ता है तो फिर उसका स्वाभाविक बल क्षीण हो जाता है। हमारे पूर्वज कब्जियत को प्राणायाम तथा उपवास चिकित्सा द्वारा दूर करते थे किन्तु आज कल केलोमेल अथवा फ्रूट साल्ट आदि का उपयोग करने ही में मान्यता मानते हैं। सरसों के दीपक के बजाय मिट्टी के तेल का लैम्प तथा मनमोहक पुष्पों के इत्र के बजाय मिट्टी के तेल संयुक्त सैन्टों की भरमार है।

प्राकृतिक सौन्दर्यवर्धक साधनों को त्याग कर अप्राकृतिक उपयोगों द्वारा लेडियों की कमर पतली करना, चीन की लड़कियों की भाँति पैरों को क्रूरता पूर्वक छोटे लोहे के बूट में मसोस मसोस कर छोटा रखना अथवा तुर्किस्तान की स्त्रियों की भाँति आलस्य में रख मोटा बनने ही में उच्चता अनुमान करते हैं। क्या उक्त लेखित नियमों से यह ज्ञात नहीं होता कि आज कल जनिता प्राकृतिक आरोग्य सौन्दर्यवर्द्धक उन नियमो का कुछ भी विचार नहीं करती कि जिनके द्वारा हमारे पूर्वज नीरोग तथा सुन्दरता की मूर्ति और वीरता के अवतार माने गये हैं। हम अप्राकृतिक बाह्य आडम्बरों द्वारा गन्तव्यदशाको भूल विपरीत मार्गानुगामी हो गये तो फिर सर्वदा रोगग्रसित रहने में क्या सन्देह है!

सब से प्रथम मनुष्य को प्रात काल उठने का अभ्यासी होना लाभदायक है। सूर्योदय से पूर्व ही शयनागार को त्यागने वाला मनुष्य सदैव नीरोग रहता है। प्रातःकाल की पवन रोग हित अमृत तुल्य होती है। दिन चढ़े तक सोते रहने से मन मलीन रहने के अतिरिक्त समस्त शरीर आलस्य पूर्ण रहता है यह स्वाभाविक नियम है कि मनुष्य प्रातःकाल उठते ही मल-मूत्रादि नित्य आवश्यक कर्मों से विसर्जन होता है। मनुष्य अधिकांश बिस्तरे से उठते ही तुरन्त पाखाने की शरण लेते हैं किन्तु ऐसा करना लाभदायक नहीं क्योंकि ऐसा करने से पेट साफ नहीं होता अस्तु कुछ समय ठहर कर अर्थात् जब शौच वेग सवेग हो जाये तब जाना उचित है। शौच-मूत्रादि वेगों को रोकना उचित नहीं क्योंकि ऐसा करने से रोग होने की सम्भा-

पना तथा एक प्रकार की विफलता उत्पन्न हो जाती है। शौच कर्म के पश्चात् आबदस्त लेते समय शीतल जल का उपयोग करना उचित है क्योंकि गरम जल से बवासीर आदि रोग होने का भय है। शौच कर्म के पश्चात् शीतल जल से ही मुखादि धोना उचित है। यथाशक्ति कुल्ले अधिक करने से दाँत डाढ़ की जड़ें मजबूत होने के अतिरिक्त रुधिर के गरम दूषित अबखरे निकल आते हैं। आँखों में भी शीतलजल के छींट लगाने से नेत्र दृष्टि तीक्ष्ण तथा एक प्रकार की शीतलता उत्पन्न होती है। उपर्युक्त कर्मों से अब काश या तैल मर्दन शरीर पुष्टि हितार्थ लाभ-प्रद है किन्तु आज कल में इस प्राचीन प्रथा का प्रायः लोप ही प्रतीत होता जाता है परन्तु सिर में तेल डालने का व्यसन छोटे बड़े सभी के समाया हुआ है। हाँ, यदि सिर पर आज समयानुसार एक एक बालिश्त लम्बे बाल न रख फिर तेल डाला जाय तो अवश्य लाभ-प्रद है। लम्बे बालों में तेल लगाना मानो केवल टीपटाप का ही द्योतक है।

स्नान व हवा

निद्रादाहश्रमहरं स्वेदकण्डूतृषापहम् ।
हृद्य मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रिय विशोधनम् ॥
तन्द्रा पापो पशमन तुष्टिदं पुंस्त्व वर्धनम् ।
रक्त प्रसादनचापि स्नान मग्नेश्चदीपनम् ॥

—स्वास्थ्य रक्षा

स्नान



र्थात् निद्रा, दाह, थकान, पसीना, खाज-खुजली और प्यास के लिये स्नान हितकर है। स्नान स्वास्थ्य को हितकर है, मैल दूर करने वाले उपायों में परमोत्तम है, समस्त इन्द्रियों को शोधन करता है। स्नान करने से चित्त प्रसन्न होता है, पुरुषार्थ बढ़ता है, रक्तशुद्ध होता है और अग्निदीप्ति होती है।

तैल मर्दन के पश्चात् स्नान की आवश्यकता होती है। गर्म जल में ठंडा मिला कर या ठंडे में गर्म मिला कर स्नान करना उचित नहीं। स्नान करते समय मूत्रेन्द्रिय को शीतल जल से बार बार धोना ठीक है। कारण ऐसा करने से

मनुष्य को अन्धा बना देने वाली कामोत्तेजक शक्तिमन्द हो जाती है और चित्त को एक प्रकार की विशेष शान्ति अनुभव होती है। मनुष्य के कटिभाग के नीचे ही गर्मी अधिक उत्पन्न होती है जो रोग का घर है अस्तु इस स्थान को बार बार धोना ठीक है। इस विषय के पुष्टिहितार्थ यह प्रमाण प्रत्यक्ष है कि हमारे पूर्वजों ने सरोवर में स्नान करना लिखा है तथा पाश्चात्य विद्वान् डाक्टर लुईकोनी ने टब को कि जिसमें कटि भाग डूबा रहता है ठीक ही बतलाया है। स्नान का स्थान ऐसा होना चाहिये कि जहाँ पवन सवेग भी प्रवाहित न हो और न अधिक मन्द ही हो। हमारा स्नान से यह अभिप्राय नहीं कि दो चार लोटे सिर पर उडेल लिये बस स्नान से छुट्टी पाई वरन् स्नान के पश्चात् या मध्य में किसी मोटे खुर्दरे वस्त्र से शरीर को खूब रगड़ कर पोछना चाहिये क्योंकि शारीरिक परिश्रम के पश्चात् शरीर के अन्दर से एक प्रकार का दूपित मैल निकल कर रोम कूपों को बन्द कर देता है कि जिनके द्वारा पवन अन्दर प्रवेश कर रक्त शुद्ध करती है। दूसरे ऐसा करने से शरीर में एक प्रकार की अग्नि उत्पन्न होती है जो स्नानान्तर लाभदायक है। स्नान के पश्चात् कुछ ईश्वराराधन भी करना मनुष्य कर्त्तव्य है। भजन करने से मनुष्य के मुख मण्डल पर एक प्रकार का विशेष तेज दर्शित होने लगता है। तत् पश्चात् हमें वस्त्रों की आवश्यकता होती है अस्तु उचित है कि हम वस्त्र सदैव ढीले-ढाले पहने क्योंकि चुस्त कपड़े हमारे शारीरिक अवयवों के बढ़ने में बाधा डालते हैं। वस्त्र सदैव स्वच्छ रखने उचित हैं क्योंकि ऐसा करने

से चित्त आनन्दित तथा भोजन में रुचि होती है। "बुखार, अतिसार, नेत्र रोग, कान के रोग, वायु रोग, पेट का अफरा, पीनस और अजीर्ण रोग वाले स्नान न करें। कसरत करके, स्त्री प्रसंग करके या पसीने में लतपत आकर स्नान करना भी रोग कारक है।"

हवा

यदि हमको दम भर हवा न मिले तो हमारा दम हवा हो जाये। परन्तु ईश्वर ने हवा इस भाँति निर्मित की है कि हमें प्रतिक्षण प्रत्येक स्थानों में प्राप्त होती रहती है। यह प्राकृतिक अटल सिद्धान्त है कि जन समुदाय के एकत्र होने से घास-पात या मृतक शरीर के सड़ने व चीजों के गलने से हवा विषैली होजाती है। किन्तु ईश्वर ने इन सब प्राणनाशक दोषों के उपाय रक्खे हैं कि जब मलयमारुत के मन्द मन्द झोंके चलते हैं तो दूषित पवन को उड़ा ले जाते हैं। शुद्ध पवनद्वारा ही रक्त शुद्ध हो पाचनशक्ति तीव्र होती है। मनुष्य जिस गृह में निवास करे उसकी खिड़कियाँ खुली रखनी चाहियें ताकि दूषित वायु निर्वासित और शुद्ध वायु प्रचुर परिमाण से प्रविष्ट होती रहे। डाक्टरों का अनुमान है कि where light cannot enter there Doctor must अर्थात् जिस गृह में प्रकाश प्रवेश नहीं करता वहाँ डाक्टर अवश्य जायगा। मुख ढक कर सोना भी एक कुटेव है क्योंकि मुख से निर्वासित पवन पुनः पुन ग्रहण करनी पड़ती है जो स्वास्थ्य-हित अनिष्टकारक होती है। हवा में चार वस्तुयें सम्मिलित

हैं—पहली आक्सीजन, दूसरी नाइट्रोजन, तीसरी कार्बन, और चौथी कार्बोनिक एसिड गेस। आक्सीजन और नाइट्रोजन दोनों प्राणप्रद हैं किन्तु अकेले एक में कोई भी जीव जीवित नहीं रह सकता। ईश्वर ने इन दोनो को इस परिमाण से मिलाया है कि इनसे किसी भाँति का भय नहीं। कार्बन कोयलों से उत्पन्न होता है कार्बोनिक एसिड गेस प्राणियो का प्राण हर्ता है, किन्तु वृक्षों का मुख्य खाद्य पदार्थ है। कार्बन का हवा में २५०० भागों में से एक भाग होता है और एक भाग आक्सीजन और चार भाग नाइट्रोजन होता है। किसी भी प्रकार के रोगोपचार के लिये परिवर्तन श्रेयस्कर है। साइन्सवालों का कथन है कि एक वर्ग इञ्च में हवा का बोझ साठ सेर होता है। ठंडी हवा गर्म से और सूखी हवा तर हवा से भारी होती है। कारबोनिक एसिड गेस की उत्पत्ति अधिक मनुष्यों के एकत्र होने, घासपात व फलफूल सड़ने से होती है जो हवा नियम से अधिक दूषित होती है उसमें दीपक प्रज्वलित नहीं रह सकता, अस्तु जीव मात्र को अधिक दिन के बन्द मकानो में जाने के पूर्व इसकी परीक्षा कर देखनी चाहिये। पानी की भाप यदि पवन में सम्मिलित न हो तो न कोई पेड़ और न कोई जीव ही जीवित रह सकता है। यह सूर्य की ताप आदि गर्मी से बचाती है। हवा में ७९ नाइट्रोजन (जीवातंक वायु) २० ९६ आक्सिजन (प्राणप्रदवायु) ०४ कारबोनिक ऐसिड गैस का भाग होता है। पानी की भाप मनुष्य शरीर से २४ घन्टे में लगभग पाँच छः छटाँक निकला करती है और प्रायः साढ़े चौदह घन फीट कारबोनिक एसिड गेस।

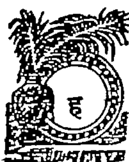
भोजन



Eat at fixed hours and do not eat too much
Chew well your food, and little water touch.
A little food at morn full meal at noon,
A supper in the evening is a boon

—*New Science of Health.*

अर्थात् भोजन नियमित समय पर करो किन्तु अधिक न खाओ, मुख में भली भाँति चबाओ और पानी कम पीओ। प्रातःकाल हलका दोपहर और सन्ध्या समय पूरा भोजन करना सर्वोत्तम है।



हम अधिकांश भक्ष्याभक्ष्य पदार्थों के गुण दोष पर ध्यान न देने के ही कारण शनैः शनैः इन्द्रियों के दास तथा रोगों से आक्रान्त होते चले जाते हैं। स्वास्थ्य के लिये अपरिमित और कम खाना दोनों ही अमंगलकारी हैं, अतः मनुष्य को संयमी होना उचित है। खाद्य द्रव्यों से केवल शरीर बल वृद्धि ही नहीं वरन् जीवन रूपी ज्वाला सर्वदा प्रज्वलित रहती है। नाइट्रोजन वाले पदार्थ शरीर गठन करते हैं, कारबन वाले उष्णता, तेल वाले चर्बी और भिन्न भिन्न प्रकार के रस विविध प्रकार के रसों की वृद्धि कर रुधिर को पुष्टता प्रदान करते हैं। स्वास्थ्य रक्षा हित हलके सादे भोजन की आवश्यकता है

किन्तु हल्का सादा भोजन कौन सा है इसको सविस्तर वर्णन करने की कोई विशेषता नहीं यह देश काल अवस्था और ऋतु पर निर्भर है। साधारणतया यह कह सकते हैं कि दुग्ध स्वभावतः सर्वश्रेष्ठ है जो बालक से वृद्धतक कोसुखकर है। भावप्रकाश में लिखा है कि—

'गोक्षीरं जीवनं बल्यं रक्तपित्तानलापहम्।
आयुष्यं पुंस्त्वकृत्पथ्यमेध्यं वृष्यं रसायनम्॥

अर्थात् गो दूध दीर्घ जीवन और बल का दाता, रक्त पित्त और वात का नाशक, पौरुष बुद्धि का बढ़ाने वाला रसायन है। भोजन नियमानुसार नियत समय पर करना लाभदायक है परन्तु प्रतिदिन एक ही प्रकार का भोजन करना अनुचित है क्योंकि ऐसा करने से अरुचि अपच मन्दाग्नि आदि अनेक रोग उत्पन्न होने की सम्भावना है। भोजन उदरस्थ करने के पूर्व उसको मुख में भली भांति चबाया जाय ताकि कण्ठस्थ गिल्टियों का रस उसमें अधिक संयोग हो जाये। इससे भोजन शीघ्र पच जाता है और दांतों का काम आंतों को नहीं करना पड़ता। भोजन करते समय मनुष्यों की मानसिक तथा आन्तरिक भाव शान्तिप्रद रहनी उचित हैं। जो मनुष्य चिन्ता में आसक्त अथवा क्रोधित हो भोजन करता है तो चाहे उसका भोजन कितना ही उत्तम क्यों न हो तथापि लाभप्रद नहीं, सत्य है Anxiety is the poison of life and cheerfulness is the best promoter of health अर्थात् चिन्ता जीवन का विष और प्रफुल्लता स्वास्थ्य वृद्धि का सर्वोत्तम उपाय है।

यह कई प्रमाणों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि भोजन करते समय
[अ]धिक पानी या अन्य कोई प्रवाही पदार्थ पीना हानिकारक है क्यों
[कि] पानी पीने से परिपाक क्रिया की क्षमता का अभाव हो जाता
[है] । वैद्यक शास्त्र में लिखा है कि यदि पानी क्रियानुसार पिया जावे
[त]ो अपच के लिये रामबाण तुल्य है । यह भोजन के मध्य में पियूष
[अ]ौर अन्त में विष समान होता है । बहुत से मनुष्य मुरब्बे, सोहन
[ह]लवा, रबड़ी आदि गरिष्ट भोजन करने के विलासी होते हैं,
[च]ाहे वे दुग्ध पचन करने में भी असमर्थ हों । अन्त में इन दुष्ट
[का]र्यों का यही परिणाम निकलता है कि उनको शीघ्र ही नाना
[प्र]ीति के उदर सम्बन्धी राग घेर लेते हैं । शुद्ध भोजन करने से
[हृ]दय शुद्ध होकर आत्म-सम्बन्धी अचलास्मृति अटल होती है
[अ]ौर इन्द्रियाँ यथार्थ कार्य करती हैं । बहुत से पचन किंकर इतने
[कृ]पण होते हैं कि आत्माओं को मसोस मसोस कर रात्रि दिन
[द्र]व्योपार्जन में निमग्न रहते हैं और सड़ी हुई दुर्गन्धमय अभक्ष्य
[प]दार्थों को लोचनों पर लोभरूपी चशमा लगा उदरस्थ कर जाते
[हैं], चाहे फिर रोग होने पर उपचार में सैकड़ों रुपया स्वाहा
[हो] जायँ तो क्या परवाह ! स्वास्थ्य सम्पादनार्थ सर्वश्रेष्ठ स्वर्ण-
[म]य सिद्धान्त केवल यही है कि पूर्ण क्षुधित हुये बिना भोजन
[क]दापि न करे । जो व्याधियाँ जीव मात्र को व्यथित करती हैं
[उ]न सब की मूल जठराग्नि की शक्ति से अधिक भक्षण कर जाना
[ह]ी है । चावल अधिक खाने से चर्बी अधिक उत्पन्न होती है अतः
[म]नुष्य मोटा प्रतीत होने लगता है तथापि निर्बल होता है क्योंकि
[च]ावल सब से कम बलदायक पदार्थ है । मिष्टान्न और क॰

पदार्थों की भरमार भी पाचन शक्ति को क्षीण कर देती है। स्नान के पश्चात् शीघ्र ही भोजन कर लेना आरोग्य प्रदायक नहीं है। कारण स्नानोपरान्त पाकस्थली में रक्त आवेश युक्त होता है एत-दर्थ हमारे पूर्वजों ने पूजापाठ-पद्धति प्रचलित कर रखी है। प्याज, लहसन और गरम मसालों से चित्त में अस्थिरता उत्पन्न होती है। उष्ण देश में तेल कम खाना हितकर है और यदि घी की जगह मक्खन खाया जावे तो और भी उत्तम हो। डाक्टरों की सम्मति है कि मनुष्य को समयानुसार वनस्पत्याहार करना स्वास्थ्य-प्रद है क्योंकि ऐसा न करने से अल्प समयान्तर रक्त दूषित हो रक्त पित्त नामक रोग हो जाता है। फलाहारी मनुष्य चिरकाल तक युवा रहते हैं क्योंकि अम्ल रस उनके हाड़-मास पर जंग नहीं लगने देता। पाश्चात्य विशेषज्ञों का तो इतना कहना है कि Fruits and vegetables which grow close to the ground are best to be eaten if possible with skin अर्थात् यदि छिलके समेत खाये जायें तो और भी लाभदायक हैं। जो मनुष्य मन्दाग्नि तथा अजीर्ण आदि रोगों के उपचार हितार्थ औषधियाँ कर हार बैठे हैं तो उन्हें उचित है कि वह कुछ दिन तक फल-व्यवहार अवश्य करें क्योंकि फलों में एक प्रकार का रस होता है जो अपथ्य हित लाभदायक है। हृदय व नेत्रों की जलन विकलता दूर करने, तथा पेट खटक और बढ़ आने पर भक्षण करना लाभप्रद है।

प्रत्येक युवा मनुष्य को प्रति दिवस ½ छटाक नाइट्रोजन, ५४ मधाधाला पदार्थ, ½ मक्खन और ½ छटांक नमक च

यादि अपने भोजन में खाने उचित हैं। साग, आलू और
नों में आक्सिजन का अधिक भाग होता है। डाक्टर पैरन का
थन है कि एक पौंड गेहूँ में चार पौंड मास से अधिक खुराक
ती है। उक्त लिखत चीज़ों के अतिरिक्त भोजन में फ़ास्फ़ोरस
र फ़ास्फ़ेट होना उचित है। फ़ास्फ़ोरस मांस रुधिर और
ड्डियों में होता है, अधिकतर मछली के मांस में। तथा फास्फ़ेट
नाज हरी तरकारियों फल फूलों में उत्पन्न होता है। जो मनुष्य
टा होना चाहें तो उनको उचित है कि वह सूखी मेवा जैसे
परा किशमिश बादामादि को दूध में औटा कर खाये और
नल्यूमिन वाले पदार्थ जैसे गेहूँ दूध घी आदि का उपयोग
धिक करें। सर्दी व बरसात में ऐसे भोजन अधिक लाभ-
यक होते हैं। जो शीघ्र पाचक हों परन्तु साथ में जिनमें
त्पन भी अधिक हो क्योंकि घी आदि पौष्टिक पदार्थों के खाने
और शारीरिक परिश्रम भोज्यानुसार न करने से पेट
नीचे के भाग में एक प्रकार की चर्बी जमा हो जाती है
जिससे पेट भारी प्रतीत होने लगता है। अजीर्ण और
-शुस्त हिताय नारङ्गी आदि तीक्ष्ण चरपरे फलों का उपयोग
हायक है।

मनुष्य का स्वास्थ्य और शक्ति भोजन पर निर्भर है। परन्तु
ष्यों की अधिक संख्या ऐसी है कि जिन्हें यह मालूम नहीं कि
सी ऋतु में कौन सा भोजन लाभप्रद है जो समस्त शारी-
शक्तियों को लाभ पहुँचा सके और कौन सी वस्तुयें स्वास्थ्य
अमिएकारी हैं। ऐसे मनुष्यों को चाहिये कि वे स्व -

शिक्षा-सम्बन्धी जो पुस्तकें उन्हें मिल सकें अध्ययन करें, इस उन्हें यथायोग्य सम्मति मिल सकती है।

जल

समस्त पृथ्वी पर जल एक ही प्रकार का होता है किन्तु भूमान्तर वस्तुयें सम्मलित हो जाने के कारण उसके लाभ व स्वाद में परिवर्तन हो जाता है। पानी दो प्रकार का होता एक भारी, दूसरा हलका। भारी पानी में खार भाग अधिक होता है अस्तु अन्नादि कठिनता से पकता है किन्तु इसमें पोषक अधिक होते हैं और उनके उपयोग से लाभ है। स्वाद में भारी पानी खारी और हलका पानी मीठा होता है। जल-शोधक ने अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा सिद्ध कर दिया है कि जल में अ- सूक्ष्म जीव हैं। अत पानी छानकर और यदि हो सके तो गरम पीना सुखकर है क्योंकि गरम करने से उसके हानिकारक मर कर नीचे बैठ जाते हैं। खारी पानी का भाप द्वारा जो बनाया जाता है, जिसे अँग्रेज़ी में डिस्टिल्ड-वाटर कहते पाचकक्रिया के लिये लाभप्रद है। जो पानी तुम पीते हो शरीर में पहुँचते ही दो भागों में विभक्त हो जाता है उप भाग रक्त बन जाता है और जो अनुपयोगी होता है मल मूत्रादि द्वारा बाहर निकलता रहता है। जल सरल युक्ति यह है कि चार मिट्टी के घड़े ऊपर-नीचे एक पर रक्खे जायें। ऊपर के घड़े के पेंदे में पाँच-छ: छोटे छोटे छेद साफ बालू और कोयले सहित पानी भर दिया जाय, नीचे के घ में कोयला कंकड़ और बालू क्रमश: भर दी जाये तो जो जल ए

घड़ों के पेंदों में से रिस रिस कर नीचे के घड़े में भर जाय, ऐसे जल को सब से उत्तम समझना चाहिये। डाक्टर लुईकोनी रचित पुस्तक से ज्ञात होता है कि जल चिकित्सा द्वारा भी रोग निवारण किये जा सकते हैं। रोगों से कम आक्रान्त होने का सब से उत्तम यही उपाय है कि हम सर्वदा शुद्ध साफ जल पियें। लिखा भी है कि Cleanness is a second godness अर्थात् स्वच्छता भी दूसरी ईश्वरीय शक्ति है। हमारे शरीर में ३/४ से अधिक अंश जल का है।

वर्षा ऋतु का पानी यक्ष्मा के लिए लाभप्रद है, नदी का पानी भूख बढ़ाता है, चश्मा का पानी कफ दूर करता है, गहरे और पक्के कुये के पानी से प्यास शान्ति होती है, लोहा गरम बुझा हुआ पानी तिल्ली जलोधर को लाभदायक है, सोने चाँदी का बुझा हुआ पानी दिल व मस्तिष्क को ताकत पहुँचाता है। यह देखा गया है कि समुद्र के पानी से बलगम साफ होता है, दस्त होते हैं और रुधिर विकार को दूर करता है। गंधक के पानी से नहाने से सौदावी रोग दूर होते हैं, फिटकरी के पानी से मुख से रक्त आना बन्द हो जाता है, शीतल जल से बेहोशी और आमाशय की व्याकुलता दूर होती है। बर्फ का पानी पीने में तो ठंडा मालुम होता है परन्तु इसकी तासीर गरम होती है।



निद्रा



Do not sleep on the back, it excites the nervous system It also heats the spinal chord and causes seminal dreams Avoid thinking in bed, it draws the blood to the head Rise early, retire early

—*Dr Paul's*



य पाठकगण ! यह विषय तो निस्सन्देह स्वतः सिद्ध है कि निद्रा की आवश्यकता आबाल-वृद्ध, निर्बल दुर्बल, परी-पैगम्बर, जीव जन्तु सभी को होती है। कहावत भी प्रसिद्ध है कि खड्ग की धार पर भी निद्रा आजाती है। सत्य पूछिये तो जब हम कोई कठिन मानसिक और शारीरिक परिश्रम करते हैं और हमारा शरीर क्लान्त होने के कारण पुन जब शारीरिक अवयवों को शान्ति अनुभव करने की आवश्यकता प्रतीत होती है और अपना अपना कार्य करने में आनाकानी करने लगते हैं तभी निद्रा का आवेग आरम्भ होता है। निद्रा दो प्रकार की होती है—एक स्वल्प और दूसरी ˆ। स्वल्प निद्रा उसका नाम है जैसे हम किसी से बातें करते आ रहे हैं और नेत्र मूँदे आराम-कुर्सी पर बैठे हैं, कि

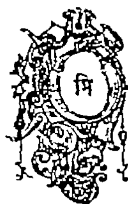
जिसे ऊँघ आना भी बोलते हैं। गहरी निद्रा वह है कि जिसमें हम मृत्यु तुल्य हो जाते हैं, अथवा यों कहिये कि इस दशा में हमारी इन्द्रियाँ भी अपना कार्य छोड़ विश्राम अनुभव करने लगती हैं। तीन घन्टे की स्वल्प निद्रा की अपेक्षा एक घन्टे की गहरी निद्रा लाभप्रद है। जवानों की अपेक्षा बूढ़ों को और बूढ़ों की अपेक्षा बच्चों को सोने की अधिक आवश्यकता पड़ती है। उनके

निद्रा



Do not sleep on the back, it excites the nervous system It also heats the spinal chord and causes seminal dreams Avoid thinking in bed, it draws the blood to the head Rise early, retire early

—*Dr Paul's*



य पाठकगण! यह विषय तो निस्सन्देह स्वतः सिद्ध है कि निद्रा की आवश्यकता आबाल-वृद्ध, निर्बल दुर्बल, परी-पैगम्बर, जीव जन्तु सभी को होती है। कहावत भी प्रसिद्ध है कि खड्ग की धार पर भी निद्रा आजाती है। सत्य पूछिये तो जब हम कोई कठिन मानसिक और शारीरिक परिश्रम करते हैं और हमारा शरीर क्लान्त होने के कारण पुनः जब शारीरिक अवयवों को शान्ति अनुभव करने की आवश्यकता प्रतीत होती है और अपना अपना कार्य करने में आनाकानी करने लगते हैं तभी निद्रा का आवेग आरम्भ होता है। निद्रा दो प्रकार की होती है—एक स्वल्प और दूसरी [illegible]। स्वल्प निद्रा उसका नाम है जैसे हम किसी से वार्ता करते जा रहे हैं और नेत्र मूँदे आराम-कुर्सी पर बैठे हैं कि

जिसे ऊँघ आना भी बोलते हैं। गहरी निद्रा वह है कि जिसमें हम मृत्यु तुल्य हो जाते हैं, अथवा यों कहिये कि इस दशा में हमारी इन्द्रियाँ भी अपना कार्य छोड़ विश्राम अनुभव करने लगती हैं। तीन घन्टे की स्वल्प निद्रा की अपेक्षा एक घन्टे की गहरी निद्रा लाभप्रद है। जवानों की अपेक्षा बूढ़ों को और बूढ़ों की अपेक्षा बच्चों को सोने की अधिक आवश्यकता पड़ती है। उनके आत्मीय जनों को उचित है कि चाहे बालक, चाहे वृद्ध और चाहे रोगी, भूखा प्यासा सो गया हो तो भी उसको निद्रा से जगाना मानो स्वास्थ्य की जगह रोग मोल लेना है क्योंकि यदि रोगी को निद्रा आजाय तो समझना चाहिये कि उसका रोग घट गया। किसी भी प्रकार के परिश्रम करने के पश्चात् सो जाने पर एकान्त में बैठ शान्ति पूर्वक स्वच्छ वायु सेवन करने से नवीन शक्ति उत्पन्न हो जाती है। कार्य करने के पश्चात् विश्राम और जागने के पश्चात् निद्रा आवश्यक है। *यदि संसार में निद्रा न होती तो* हम रात दिन शारीरिक व मानसिक परिश्रम करते करते ही अन्तिम समय होने के पूर्व ही समस्त शारीरिक शक्ति नष्ट हो जाने के कारण *मृत्यु-गामी* हो जाते। जब कभी मानसिक कार्य अधिक करने से या किसी कार्यवश अधिक समय तक जागने से मस्तिष्क में एक प्रकार की रुक्षता उत्पन्न होने से यदि निद्रा न आवे तो ऐसे रोगी को उचित है कि वह स्वच्छ सुगन्धित शीतल वायु में नेत्र मूँद सर्व साँसारिक चिन्ताओं और विचारों से विरक्त हो शान्ति अनुभव करने से निद्रा आने लगती है। *मिठी निद्रा* नामक पुस्तक में लिखा है कि यदि आप किसी शव के शरीर के सामने की

पसली और उदर की दीवार को निकाल कर अलग कर दें तो आप देखेंगे कि आमाशय की थैली के एक ओर हृदय और दूसरी तरफ यकृत है। शरीर के आन्तरिक अंगों में सब से ठोस और भारी भाग यकृत ही है। बाम करवट सोने से यकृत का भार आमाशय पर आजाता है और हृदय को दबाता है। अन्तिम परिणाम यह होता है कि न तो आमाशय ही और न हृदय ही अपना कार्य शीघ्र और सुगमता से कर सकता है। दाहिण करवट सोने से आमाशय और हृदय दोनों ही कार्य भली भाँति कर सकते हैं और पाचन शक्ति तीव्र होती है, आमाशय में से आहार पक कर आँतों में जाता है। यदि यकृत का भार, आमाशय पर पड़े तो फिर इस मार्ग से आंतों को, आहार निकालने में रुकावट हो सकती है। पैरों की अपेक्षा मस्तक ऊँचा रखना उचित है क्योंकि मस्तक ऊँचा रहने से रक्त भ्रमण कम हो जाता है, और यही सर्वोत्तम उपाय निद्रा का है। मस्तक ऊँचा और टाँगें ऊँची कर और बीच का भाग नीचा कर सोने से हृदय निर्बल हो जाता है।

रात के समय वृक्षादि में से एक प्रकार का गैस (Nitrogen gas) नामक निकला करता है। अस्तु सिद्ध होता है कि बिस्तरे के पास वृक्षादि के गमले आदि रखना हानिप्रद है। शयनागार ऐसी जगह होना चाहिये कि न तो जहाँ शीतल वायु सवेग से ही आती हो और न इतनी गर्मी ही हो कि जिस कारण जी मिचलाने लगे या व्याकुलता अनुभव होने लगे। दूसरे सोने के मकान में तो पानी की सील ही होनी चाहिये और न सर्दी के कारण

उसमें कोयले की सिगड़ी जला कर सोना चाहिये क्योंकि कोयलों में से विष उत्पन्न होता है कि जिससे मनुष्य मर तक जाते हैं। स्वास्थ्य हित मुख ढक कर शयन करना भी हानिप्रद है। जिस मनुष्य को रात्रि में बुरे भयानक स्वप्न प्रतीत होते हों अथवा धड़धड़ाते हों तो उन्हें उचित है कि वह सोने के पूर्व शीतल जल से मुख हाथ पैर खूब धोले और चित्त सो कर छाती पर हाथ रख कर न सो जाये। इसके अतिरिक्त इसका दूसरा कारण यह है कि जब मनुष्य अधिक खा जाता है तो आमाशय पर ज़ोर पड़ता है, श्वास में प्रति-बन्धन होने तथा फुफ्फुस में पूर्ण वायु न पहुँचने के भी कारण बुरे स्वप्न दिखलाई दिया करते हैं।

रात्रि के पहने के वस्त्र ढीले होने चाहिये जिससे रक्त भ्रमण में बाधा न हो, दूसरे अवयवों के वृद्धि व सङ्कुचन में बाधक न हो। भावप्रकाश में इस प्रकार भी लिखा है कि प्रथम सीधा लेट कर ८ श्वास ले, फिर दक्षिण करवट होकर १६ श्वास लेवे और फिर वाम करवट ३२ श्वास लेकर सो रहे क्योंकि नाभि में वाम ओर ही अग्नि रहती है। कपड़े में मुख ढक कर उलटा अर्थात् तकिया पर मुख कर और हाथ को मस्तक पर रख कर सोना हानिप्रद है। निद्रा के समय मांस-पेशियाँ शिथिल कोमल हो जाती हैं और शारीरिक अन्य इन्द्रिय व अवयव कार्य करना छोड़ देते हैं। दूसरे निद्रा के समय भीतरी गरमी अधिक निकलने से पसीना अधिक निकलने लगता है। मनुष्य को उचित है कि कम से कम सप्ताह में एक बार तमाम बिस्तरे व शरीर के कपड़े बदल डालने चाहिये क्योंकि ऐसा न करने से चर्म रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

एक महात्मा का यह भी कथन है कि अनिद्रा का उत्तम उपाय एक यह भी है कि बिस्तरे पर पहुँच कर प्रथम तुम संसार से तुरन्त विरक्त होकर प्राणायाम करो या उस कार्य को करो कि जिसमें तुम्हारा चित्त मनोरंजन प्राप्त न करे और तुम्हें उदासीनता आ घेरे। इसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि किसी विद्यार्थी को यदि तुम उसके कोर्स की पुस्तक दोगे तो उसे पढ़ते समय नींद आने लगेगी और यदि उसे ही कोई दिलचस्प उपन्यास दे दोगे तो वह रात भर बड़ी उत्सुकता के साथ पढ़ता रहेगा और नींद नाम मात्र को न आयेगी। दूसरे नींद बुलाने का उपाय शारीरिक परिश्रम भी है। प्रायः मनुष्य चाय, मदिरा आदि का सेवन करते हैं तब भी नींद नहीं आती क्योंकि उक्त वस्तुओं से उत्तेजक होने के कारण मस्तक में रक्त अधिक जमा होने लगता है जो निद्रा का शत्रु है। जो मनुष्य यह समझते हैं और ऐसा कहते हैं कि भोजन करने के पश्चात् तुरन्त सो जाने से पाचन शक्ति तीव्र होती है, भूल करते हैं। दूसरे दो मनुष्यों को एक बिस्तरे पर न सोना चाहिये क्योंकि स्वास्थ्य नियमानुसार यदि एक को कोई रोग हुआ तो सम्भव है कि वही रोग दूसरे के भी हो जाये क्योंकि शरीर में एक प्रकार की आकर्षण शक्ति होती है जो परस्पर चिपटे रहने से एक दूसरे के शरीर में प्रवेश कर सकती है। धूप में सोने से शरीर और मुख की कान्ति मलीन होती है और चन्द्रमा के उजाले में सोने से मुख छवि और नेत्र ज्योति बढ़ती है। अब रहा सोने के विषय में सो सर्वोत्तम समय प्रातःकाल ही है। सूर्योदय के प्रथम उठने से आयु वृद्धि और पातक निवृत्ति

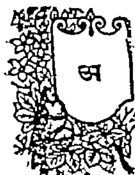
होती है। प्रातःकाल शहर के बाहर जाकर शुद्ध शीतल सुगन्धित वायु सेवन करने से पाचन शक्ति बढ़ती है, रक्त शुद्ध होता है और मुख-मण्डल की व नेत्र की ज्योति बढ़ती है।



व्यायाम

By exercise our muscles are energized,
Brain is strengthened and nerves are vitalized,
By exercise the lungs are made strong,
Blood is purified and the life become long

—Dr K.P



अर्थात् व्यायाम से हमारी मांस-पेशियाँ गठित, मस्तिष्क स्नायु और फेफड़े मज़बूत होते हैं। रक्त शुद्ध हो दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। हर्ष का विषय है कि अब देशोन्नति के साथ साथ स्वास्थ्योन्नति की भी चर्चा प्रचलित हो उठी है। जगद्गुरु भारत के लिये यह कोई नवीन विषय नहीं तथापि कुछ समय पूर्व इस पवित्र प्रबल शक्ति प्रदाता प्रथा का प्रायः लोप सा होने लगा था। यदि सत्य पूछिये तो हमारे देश की अधोगति का मूल कारण स्वास्थ्य की हीनावस्था ही है। वृटिश शासन में मनुष्य शारीरिक बल की अवहेलना करने लगे, और शक्तिहीन होने में उन्हें कोई हानि प्रतीत न हुई। पहलवान लोग उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाने लगे अतः कुछ समय में ही प्राचीन व्यायाम पद्धतियाँ लुप्त हो गई और पाश्चात्य व्यायाम-कला—यथा टेनिस, क्रिकेट, आदि

और अवस्था के विपरीत होने पर भी हमारे घरेलू खेल समझे जाने लगे। पाश्चात्य व्यायाम के लिये प्रथम तो द्रव्य की अधिक आवश्यकता है, दूसरे स्थान और तीसरे शिक्षक की विशेषता, किन्तु देशी व्यायाम चर्या में इन बातों की आवश्यकता नहीं होती। दीन हीन भारतवासी हारीजैन्टल-बार पेरलल-बार आदि कहाँ से खरीदें। हम अपने दण्ड बैठक में ही मग्न हैं उन के डम्बलस उन्हीं को मुबारिक रहें। ईश्वर को सहस्त्र धन्यवाद है कि जिनकी कृपा से आज प्रो० राममूर्ति को स्वास्थ्य विषय में भारत का आचार्य होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस वीर ने अपने प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा साक्षात् परिचय दे दिया है कि प्राचीन पद्धतियों द्वारा ही हम अतुल शक्तिशाली हो सकते हैं। प्रो० राममूर्ति प्रो० दोरास्वामी कृष्ण शील आदि के उद्योग से पुनः प्राचीन प्रणाली की व्यायाम शालायें स्थापित होने लगी हैं किन्तु फिर पाश्चात्य विचार हमारे हृदय में इतना गंभीर स्थान प्राप्त कर चुके हैं कि हम प्रत्येक विषय में उन्हें उच्च और प्रधान ही मानते हैं, चाहे वहाँ के कोई कितने ही निरर्थक नीरस विषय क्यों न हो।

हमारे छात्रालयों में जो व्यायाम-चर्या प्रचलित है वह अनेक दोष युक्त है। हमारे नवयुवक शारीरिक व्यायाम के अनन्तर शीघ्र ही अभ्यास अथवा अन्य किसी मानसिक कार्य में चित्त हो जाते हैं जो सर्वथा अमाङ्गल्य तथा अयुक्त है। शारीरिक परिश्रम के पश्चात् यदि भोजन और विश्राम के उपरान्त फिर मानसिक कार्य किया जाय तो कोई हानि नहीं। पूर्व काल में भारत अंग

निवासी ब्रह्मचर्य और प्राणायाम द्वारा बल-वर्धन करते थे किन्तु कुछ समय पश्चात् यह प्रथा न रही। तब से शारीरिक शक्ति संचय के लिये वीर्य-बल-वर्धक व्यायाम तथा मल्ल विद्या का प्रयोग करने लगे। किसी भी प्रकार के कष्ट-कर कार्य करने से चित्त पर एक प्रकार की मालिन्यता व्याप्त हो जाती है। किन्तु व्यायाम से सर्व भागों में स्फूर्ति आने के अतिरिक्त आत्मा में अपूर्व चैतन्यता उत्पन्न होने लगती है। किसी का वचन अक्षरशः सत्य है "दवा कोई वरजिश से बहतर नहीं, यह नुसखा है कम खर्च वाला नहीं।" जिस क्रिया से हमारे फेफड़ों को भली भाँति फैलने का अवसर मिले उसका नाम व्यायाम है। शरीर के स्थूल भाग जिनकी सहायता से हम चलते फिरते हैं पुट्ठे कहलाते हैं। परिश्रम से यह पुट्ठे हृष्टपुष्ट और सुडौल रहते हैं, अन्यथा सूख कर निर्बल हो जाते हैं। सत्य है, शरीर परिश्रम से इतना क्षीण नहीं होता कि जितना आलस्य से "Health lies in labour and there is no royal road to it but through toil" अर्थात् परिश्रम के अतिरिक्त स्वास्थ्य प्राप्त करने का कोई अन्य उपाय नहीं।

अनभ्यस्त नव शिक्षित युवक प्रथम दिवस अत्याधिक और स्फुटिक प्रणाली द्वारा विशेष व्यायाम कर लेने के कारण दूसरे दिन व्यायाम के नाम कानों पर हाथ रखने लग जाते हैं। उन्हें उचित है कि वह क्रमानुगत व्यायाम के अभ्यासी हों। दूसरे दिवस कुछ शारीरिक पीड़ा होने पर भी साहसहीन होकर न बैठ जायें वरन् बराबर व्यायाम करते ही रहें। व्यायाम करते समय मुख खोल कर लेने तथा बिलकुल श्वास रोक लेने की

अपेक्षा नासिका द्वारा श्वास लेना उत्तम है। अधिकांश मनुष्य व्यायाम सम्बन्धी निम्नांकित प्रश्न कर बैठते हैं। यथा व्यायाम के लिये कौन समय उत्तम है, किस आयु से प्रारम्भ करना चाहिए तथा शरीर से पसीना निकलना उचित है या अनुचित है ? मेरे अनुमान से समय के विषय में सब से प्रथम किसी भी प्रकार के भोजन के दो तीन घण्टे पश्चात् और इतने ही समय पूर्व व्यायाम करना श्रेयस्कर है। दूसरे समय के विषय में, अभ्यासी की रुचि और अवकाश पर निर्भर है फिर भी साधारणतया सर्वोत्तम समय प्रातःकाल और साधारण समय सन्ध्या समय है। लिखा भी है कि Early to bed and early to rise, makes a man healthly wealthy and wise अर्थात् जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को स्वास्थ्य, धनी और बुद्धिमान् बनाता है। अब रहा आयु के बारे सो पाँच-छः वर्ष से १०-११ वर्ष की आयु तक हल्का सादा व्यायाम करना उचित है जैसे भागना, कूदना, फुटबाल आदि खेलना और १०-१२ वर्ष से विशेष व्यायाम करने में कोई हानि नहीं जैसे दण्ड-बैठक करना, जोड़ी हिलाना आदि। अब पसीना निकलना व न निकलना प्रायः शरीर सामर्थ्य पर अव लम्बित है। जो निर्बल और रोगी हैं उनके शरीर से पसीना शीघ्र ही निकलने लगता है और जो आरोग्य व बलवान हैं उनके शरीर से स्वेद सविलम्ब प्रवाहित होता है। निदान रोगी निरोगी दोनों को क्लान्त और अरुचि होने पर व्यायाम बन्द करना श्रेयस्कर है।

व्यायाम के पश्चात् तुरन्त ही उष्ण पदार्थ सेवन करना

निवासी ब्रह्मचर्य और प्राणायाम द्वारा बल-वर्धन करते थे किन्तु कुछ समय पश्चात् यह प्रथा न रही। तब से शारीरिक शक्ति संचय के लिये वीर्य-बल-वर्धक व्यायाम तथा मल्ल विद्या का प्रयोग करने लगे। किसी भी प्रकार के कष्ट-कर कार्य करने से चित्त पर एक प्रकार की मालिन्यता व्याप्त हो जाती है। किन्तु व्यायाम से सर्व भागों में स्फूर्ति आने के अतिरिक्त आत्मा में अपूर्व चैतन्यता उत्पन्न होने लगती है। किसी का वचन अक्षरशः सत्य है "दवा कोई वरजिश से बहतर नहीं, यह नुसखा है कम खर्च वाला नहीं।" जिस क्रिया से हमारे फेफड़ों को भली भाँति फैलने का अवसर मिले उसका नाम व्यायाम है। शरीर के स्थूल भाग जिनकी सहायता से हम चलते फिरते हैं पुट्ठे कहलाते हैं। परिश्रम से यह पुट्ठे हृष्टपुष्ट और सुडौल रहते हैं, अन्यथा सूख कर निर्बल हो जाते हैं। सत्य है, शरीर परिश्रम से इतना क्षीण नहीं होता कि जितना आलस्य से "Health lies in labour and there is no royal road to it, but through toil" अर्थात् परिश्रम के अतिरिक्त स्वास्थ्य प्राप्त करने का कोई अन्य उपाय नहीं।

अनभ्यस्त नव शिक्षित युवक प्रथम दिवस अत्याधिक और स्फुटिक प्रणाली द्वारा विशेष व्यायाम कर लेने के कारण दूसरे दिन व्यायाम के नाम कानों पर हाथ रखने लग जाते हैं। उन्हें उचित है कि वह क्रमानुगत व्यायाम के अभ्यासी हों। दूसरे दिवस कुछ शारीरिक पीड़ा होने पर भी साहसहीन होकर न बैठ जायें वरन् बराबर व्यायाम करते ही रहें। व्यायाम करते समय मुख खोल कर लेने तथा बिलकुल श्वास रोक लेने की

अपेक्षा नासिका द्वारा श्वास लेना उत्तम है। अधिकांश मनुष्य व्यायाम सम्बन्धी निम्नांकित प्रश्न कर बैठते हैं। यथा व्यायाम के लिये कौन समय उत्तम है, किस आयु से प्रारम्भ करना चाहिए तथा शरीर से पसीना निकलना उचित है या अनुचित है? मेरे अनुमान से समय के विषय में सब से प्रथम किसी भी प्रकार के भोजन के दो तीन घण्टे पश्चात् और इतने ही समय पूर्व व्यायाम करना श्रेयस्कर है। दूसरे समय के विषय में, अभ्यासी की रुचि और अवकाश पर निर्भर है फिर भी साधारणतया सर्वोत्तम समय प्रातःकाल और साधारण समय सन्ध्या समय है। लिखा भी है कि Early to bed and early to rise makes a man healthly wealthy and wise अर्थात् जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को स्वास्थ्य, धनी और बुद्धिमान् बनाता है। अब रहा आयु के बारे सो पाँच-छः वर्ष से १०-११ वर्ष की आयु तक हलका सादा व्यायाम करना उचित है जैसे भागना, कूदना, फुटबाल आदि खेलना और १०-१२ वर्ष से विशेष व्यायाम करने में कोई हानि नहीं जैसे डन्ड-बैठक करना, जोड़ी हिलाना आदि। अब पसीना निकलना व न निकलना प्रायः शरीर सामर्थ्य पर अवलम्बित है। जो निर्बल और रोगी हैं उनके शरीर से पसीना शीघ्र ही निकलने लगता है और जो आरोग्य व बलवान हैं उनके शरीर से स्वेद सविलम्ब प्रवाहित होता है। निदान रोगी-निरोगी दोनों को क्लान्त और अरुचि होने पर व्यायाम बन्द करना श्रेयस्कर है।

व्यायाम के पश्चात् तुरन्त ही उष्ण पदार्थ सेवन करना

हानिकारक है क्योंकि ऐसा करने से मस्तिष्क के रोग हो हैं। व्यायाम करते समय शरीर पर लंगोट के अतिरिक्त अन्य कोई वस्त्र धारण न करना चाहिये क्योंकि कपड़े पट्ठों की को रोकते हैं और सकुचित होने में बाधा डालते हैं। युवाओं के लिये तो डण्ड-बैठक आदि अनेक व्यायाम हैं, किन्तु वृद्ध मनुष्यों के लिये सुप्रभात तथा सायंकाल हरिततृणाच्छादित रम्य उद्यानों में वायु सेवनार्थ यथाशक्ति भ्रमण ही व्यायाम है। भ्रमण करते समय धीरे धीरे न चल कर द्रुतगति से चलना उचित है कारण ऐसा करने से शारीरिक शक्ति सचारी स्नायु आदि उत्तेजित हो जाते हैं और रक्त में उष्णता उत्पन्न हो जाती है। क्योंकि किसी ने कहा भी है कि Run slow and walk fast अर्थात् चलना तेज और दौड़ना धीरे धीरे।

शारीरिक बलवर्द्धन तथा अशक्ति भागों को सशक्ति बनाने का सुलभ साधन केवल एक मात्र एकाग्रता ही है। एकाग्रता की शक्ति प्रदायक विचारों की लहरें अभ्यान्तर अवस्थाओं द्वारा वैद्युतगति की भाँति अशक्ति भागों में प्रस्थान कर शक्ति सम्पादित करती हैं। व्यायाम करते समय दो शीशे आपने सामने रख अपने पुट्ठों (muscles) का प्रतिबिम्ब देखा करें तो इस प्रकार धीरे धीरे एकाग्रता (will power) स्वयं उत्पन्न होने लगती है। इच्छा शक्ति द्वारा ही हम हृदय की सपादन शक्ति को घटा बढ़ा तथा मांस-पेशियों को गठित कर सकते हैं। व्यायाम के पूर्व तेल की मालिश करना अत्यन्त लाभदायक है क्योंकि प्रथम तो शरीर पर चिकनाहट, दूसरे हड्डियों में दृढ़ता और तीसरे मसल्स

पचने में सुविधा होती है। बिलकुल खाली पेट या क्षुधा लगने पर व्यायाम करने से निरुत्साहता तथा मस्तिष्क रोग हो जाते हैं। अधिक ठूस कर भी न खाना चाहिये क्योंकि व्यायाम करने से खाये हुये अन्न पर एकदम पचन क्रिया आरम्भ हो जाती है किन्तु उस समय तक अन्न असमर्थ होने के कारण कभी आमाशय से निकल जलाशय में आजाता है जो स्वास्थ्य हित अनिष्टकारी है। शारीरिक परिश्रम से हमारी धमनियाँ सप्रसारित होने के कारण रक्त पूर्व की अपेक्षा और भी सवेग चक्कर लगाने लगता है कि जिससे परिपोषक पदार्थ और आक्सिजन अधिक प्रमाण से संम्पादित होता रहता है जो स्वास्थ्यहित लाभदायक है। किसी ने ठीक लिखा है कि रक्त-पित्त रोगी, श्वास रोगी, क्षय रोगी भ्रमरोगी आदि को व्यायाम करना उचित नहीं।

व्यायाम पर मेरे दो शब्द

हे मनुष्यवर व्यायाम कर चाहू एक अपनाइये।
दौर्बल्य रूपी शत्रु को, संहार कर सुख पाइये ॥

बहुत से मनुष्यों के युवावस्था में अधिक मोटे हो जाने के कारण शरीर के प्रत्येक अवयव इतने निर्बल तथा बेडौल हो जाते हैं कि किंचित् मात्र दबाने या शीघ्रता पूर्वक चलने से उनका श्वाँस लुहार की धौंकनी के समान चलने लगता है और शरीर में एक प्रकार की पीड़ा होने लगती है। ऐसे आदमी भोजन करने तथा आराम-तल्बी में तो बड़ों बड़ों को मात कर देने का साहस रखते हैं किन्तु परिश्रम के नाम कोसों दूर भागते हैं और शीघ्र

ही जीवन के आनन्द शारीरिक शक्ति तथा साहस से वंचित हो बैठते हैं। दूसरों की सहायता की अभिलाषा रखने वालों का जीवन वास्तविक नहीं। सत्य है–'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।' जब ऐसे मनुष्य किसी हृष्ट-पुष्ट मनुष्य की सुदृढ़ चौड़ी छाती को अवलोकन करते हैं तो उन्हें अपनी हीनावस्था पर अनुताप होने लगता है कि हाय हम ऐसे क्यों न हुये! यदा कदा साहस कर शारीरिक परिश्रम को उद्यत भी हुए तो न इस विचार से निरुत्साही हो जाते हैं कि हम बाल्यावस्था से निर्बल हैं या हमारे माता पिता निर्बल हैं तो फिर हम किस भाँति शक्तिशाली हो सकते हैं। शारीरिक परिश्रम के लिये अधिक समय की आवश्यकता के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों में अधिक परिवर्तन करना पड़ेगा, अतः सब व्यर्थ है।

मैं दावे से कहता हूँ कि चाहे मनुष्य की शारीरिक स्थिति कितनी ही निर्बल क्यों न हो चुकी हो तब भी आरोग्य वर्द्धक नियमों के पालन द्वारा निःसन्देह दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार के हम अनेकों दृष्टान्त अवलोकन करते हैं कि दुराचरण के कारण, दीर्घायु मनुष्यों की सन्तान स्वल्पायु और स्वल्पायु लोगों के वंशज सदाचार के प्रभाव से दीर्घजीवी और सबल हो जाते हैं, अतः मनुष्यों का अपने माता पिता पर दोषारोपण करना केवल मूर्खता है। ऐसे मनुष्यो को दीर्घजीवन हितार्थ यथेच्छा तथा उच्छृङ्खलता से कार्य न करना पड़ेगा। कोई कोई मनुष्य यह प्रश्न भी कर बैठता है कि मैं तो नित्य आध घण्टा या एक घण्टा व्यायाम करता हूँ तो भी मेरे

मसल्स गठित और सुन्दर क्यों नहीं बनते। इसका यही उत्तर है कि हर तरह की अस्कुटिक प्रणाली के व्यायाम से मसल्स नहीं बन सकते हैं वरन् शरीर को सिकोड़ना, बढ़ाना और सम्पूर्ण शारीरिक शक्ति द्वारा गठित करने पर ही मांस-पेशियों की शक्ति विशेषतः निर्भर है। दूसरे मुख्य मुख्य भाग के लिये भिन्न भिन्न व्यायाम नियत हैं। इस व्यायाम में २—३ मिनट पर्यन्त शरीर के प्रत्येक अवयवों तथा अन्यान्य स्थलों की मांस पेशियों को गठित करना पड़ता है। नीरस शरीर के विषयासक्त पदार्थ शीघ्र ही अलग होने लगते हैं। अंग्रेजों में इस व्यायाम को Static or tension exercise कहते हैं। इस व्यायाम से दुबले पतले मनुष्य हृष्ट पुष्ट हो जाते हैं और मोटे भी सुडौल अर्थात् जिनका शरीर अधिक मांस के मारे थलथलाने लगता है उनका शरीर सुन्दर सुडौल बन जाता है। इसका कारण यह है कि दुर्बल मनुष्यों की पाचन शक्ति तीव्र हो मांस में पुष्टता प्रदान करती है और मोटे मनुष्यों का व्यर्थ मल व चर्बी छूट कर शरीर सुडौल हो जाता है। इस व्यायाम से प्रथम तीन दिवस तुम्हारे शरीर में अधिक पीड़ा होगी और तुम्हें हाथ पैर हिलाने में कष्ट होगा किन्तु इस समय के कुछ कष्ट से अन्त में तुम्हें अपूर्व आनन्द अनुभव होगा।

अब मैं स्वयं दूसरों के सम्बन्ध में न लिख कर अपने ही विषय में लिखने की धृष्टता करता हूँ। मैं बाल्यावस्था में सर्वदा इतना रोगी रहा करता था कि कई बार जीवन की आशा न रही थी किन्तु मेरे आत्मीय जनों ने मुझे सदाचार पथ पर पदार्पण

कराया था। युवावस्था प्राप्त होने पर मैं स्वयं स्वास्थ्य प्रदायक नियमों का पालन करने लगा और भीमसेन, हनुमानादि वीरों के चरित्र मेरे चित्रपट पर अंकित होने लगे। अस्तु यही इच्छा हुई कि उनके समान न सही तो भी शरीर अवश्य सुदृढ़ बनाऊँगा। इसके कुछ समयान्तर ही प्रो० राममूर्ति के बलकारी कर्त्तव्यों को अवलोकन कर तथा उनके स्वास्थ्य सम्बन्धी अच्छे भाषण श्रवण करने से मुझ में और भी नवीन उत्साह उत्पन्न हो गया और मैं एक विख्यात पहलवान बनने की इच्छा से नित्य प्रति व्यायाम करने लगा। मेरे रहन सहन तथा भोजनादि के विषय में केवल इतना ही लिख देना ठीक होगा कि मेरी प्रत्येक बातें एक साधारण मनुष्य के समान हैं, कोई नवीन बात नहीं। मैंने कुछ समय तक पैरेलल-बार्स डम्बल्स आदि विलायती कसरतें की किन्तु कोई विशेष लाभ की सम्भावना न दीख पड़ी, अस्तु मैं इन्हें छोड़ पुन प्राचीन प्रथानुसार ही व्यायाम करता रहा। मैंने जो कुछ शारीरिक बल प्राप्त किया है, वह सब एतद्देशीयपद्धति द्वारा ही प्राप्त किया है क्योंकि अंग्रेजी व्यायाम से तीव्रता तथा चालाकी विशेष उत्पन्न होती है किन्तु देशी व्यायाम से बल प्राप्त होता है। सैण्डों के डम्बल्स कि जिनका चार्ट आज समय घर घर लटक रहा है अपने ही सतोल के आधार पर क्लेन्हेलोपर्स ख़ेजम को देख कर बनाये हैं। विशेषता है तो केवल यही है कि उनके आविष्कर्ता, यूरोपियन हैं, दूसरे वलत् काल के जैण्टलमैनों के हितार्थ मनोरंजन की अच्छी सामग्री है। इस अवसर में मैंने कितने ही

सज्जनो से शारीरिकोन्नति के उपाय पूंछे किन्तु कोई भी मुख्य प्रथा न बता सका। तब मैं स्वयं निज अनुभव द्वारा शक्ति उपार्जित करता रहा और आज ईश्वर की कृपा से वह असीम शक्ति प्राप्त कर ली है कि मैं निम्नांकित बल के कर्त्तव्य प्रदर्शित कर सकने में समर्थ हुआ हूँ:—

१००० पौंड वज़न के पत्थर को छाती पर रखना।

आदमियों से भरी गाड़ी को छाती पर से उतारना।

लोहे की मोटी ज़ञ्जीर तोड़ना।

१५ हार्स पावर की मोटर रोकना।

इसके अतिरिक्त और भी कितनी ही उल्लेखनीय घटनायें हैं किन्तु मैं स्वयं अपने मुंह मियाँमिट्ठू बनना उचित नहीं समझता, अतः प्रसङ्गवश ऐसा लिखने पर बाध्य हुआ हूँ, पाठक क्षमा करें। पूर्व मेरा यह विचार था कि मैं भ्रमण कर स्वशक्ति का पूर्ण परिचय दूँ किन्तु सखेद लिखना पड़ता है कि कितनी ही असामयिक घटनायें घट जाने पर सफल मनोरथ न हो सका। अधिकांश मनुष्य यह अनुमान कर बैठते हैं कि उक्त लिखित आश्चर्यप्रद बलकारी कर्त्तव्यों के करने के लिये दैवी मानसिक शक्ति की आवश्यकता है परन्तु यह उनकी भ्रामिक कल्पना है। यथार्थ में शारीरिक बल प्राणायाम तथा अभ्यास पर निर्भर है। अब मैं इसी विषय में कुछ आवश्यक बातें बताता हूँ।

सब से प्रथम पत्थर रखने के पूर्व प्रत्येक अभ्यासी को २ मिनट तक श्वास रोकने का अवश्य अभ्यास कर लेना चाहिये। प्रथम बार इतना भारी पत्थर न रख लेना चाहिये कि जिससे हानि

होने की सम्भावना है। छाती पर पत्थर रख तुड़ाते समय दर्शक गण अवलोकन कर अचम्भित हो जाते हैं किन्तु जिसने पत्थर रखने का पूर्ण अभ्यास कर लिया तो फिर उसके लिये यह कार्य बायें हाथ का खेल है। यदि आप अपने हाथ पर दो पत्थर रख ऊपर वाले पत्थर को तोड़ेंगे तो आप के हाथ को किसी भी प्रकार की वेदना विदित न होगी बस छाती की भी यही दशा है। पत्थर रखते समय कमर, छाती और गर्दन के नीचे कपड़ा या गद्दा इस भाँति रख लेना चाहिये कि जिससे गर्दन छाती के बराबर या कुछ ऊँची रहे क्योंकि नीची रहने से अज्ञानता हो जाती है। जो फिर किसी दूसरे मनुष्य द्वारा मस्तक दबाने या उठाने से दूर होती है। इसका यह तो प्रत्यक्ष प्रमाण है कि तुम भरपूर श्वास खींच सीधे खड़े हो, हाथ नीचे को लटका दो और गर्दन पीछे की तरफ कर श्वास को छाती पर पूर्ण प्रभाव से पटकोगे तो तुम तुरन्त ज्ञान हीन हो जाओगे। बस, इसी भाँति पत्थर से छाती पर प्रभाव पड़ता है और गर्दन नीची रहने से बेहोशी हो जाती है।

अब देखिये, जंजीर तोड़ते समय श्वास निर्वासित कर पुनः नवीन वायु ग्रहण कर सकते हैं किन्तु पत्थर रखते समय ऐसा करना मानों स्वयं मृत्यु के मुख में प्रवेश करना है। जंजीर तोड़ते समय बार बार सवेग श्वांस लेने से कई लाभ हैं। प्रथम तो दर्शक गण यही अनुमान करते हैं कि जंजीर इतनी मोटी और मजबूत है कि कई बार-जोर लगाना पड़ता है और दूसरे सुअवसर पा तोड़ने में सुभीता होती है। दो कुर्सियों के

नीचे एक आड़ी लकड़ी रख उसमें जंजीर अटका दी जाती है और एक आदमी कुर्सियों पर बैठा दिया जाता है और स्वयं को भी लकड़ी पर खड़ा होना पड़ता है। जंजीर तोड़ने के पूर्व ही इतनी तंग रखनी चाहिये कि तोड़ते समय ढीली हो जाने के कारण फिर दूसरी बार छोटी न करानी पड़े। जंजीर सदैव आगे की अपेक्षा पीठ पीछे अधिक तंग रख कर फिर कन्धों को पीठ पीछे की तरफ मोड़ कर और जरा आगे को झोंका देकर तोड़ देनी चाहिये।

अब मोटर के विषय को लीजिये यह एकदम न चला कर धीरे धीरे चलाना ठीक है। जिस किसी को अभ्यास हितार्थ नित्य प्रति मोटर न मिल सके तो उसे उचित है कि वह टग आफ-वार करे। यदि मनुष्य अधिक न मिलने के कारण ऐसा करने में भी असमर्थ हो तो उसे उचित है कि एक लकड़ी का खूंटा जमीन में गाड़ कर और उसमें रस्सी बाँध कर स्वयं दूर बैठ कर उसे उखाड़ने का यत्न करे। मोटर रोकते समय बीच में स्वास त्याग करने से हानि की संभावना है, अतः स्वास भरपूर खींच पैर के घुटने बिलकुल साध कर गर्दन तिरछी रखनी चाहिये।

अब मैं तुम्हें शरीर गठित तथा सुडौल बनने के लिए यह उत्तम व्यायाम-क्रिया बताता हूँ कि जिसमें न अधिक समय की, न खाद्य पदार्थों में परिवर्तन करने की और न अभ्यस्त मुगदर आदि किसी भी वस्तु के लिए द्रव्य की ही आवश्यकता हो।

मेरी व्यायाम प्रणाली

समस्त शरीर का एक ही व्यायाम

प्रथम शरीर पर तेल की मालिश कर सीधे खड़े होकर दोनों हाथों को पीठ पीछे ले जाओ और अब भरपूर श्वास खींच कर मुट्ठियां इतने जोर से बांधो कि मानों कोई तुम्हारे हाथ से कुछ छीन रहा है और तुम देना नहीं चाहते हो। अब श्वास रोकते हुये और मुट्ठियों को बलानुसार दबाते हुये आगे की तरफ इतने ऊँचे ले आओ कि मुट्ठियां एक दूसरी बगल के पास आजावें और पसलियों पर भी पूर्ण प्रभाव पड़े। इस समय जांघों और पिंडलियों को भी सामर्थ्यानुसार ऊपर की तरफ खींचते रहो और ज्यो ज्यों श्वास खींचते जाओ त्यो त्यों सम्पूर्ण शरीर का बोझ पैर की अँगुलियों पर सम्भालते आओ। अब कुछ समय उसी स्थिति ही में ठहर कर और फिर हाथों को पीछे की तरफ ले जाते समय शरीर ढीला न कर देना चाहिये वरन् पूर्ण गठित रखना चाहिये। यह क्रिया १० बार करनी चाहिये, और एक क्रिया में दो मिनट लगने चाहिये।

बाजू के सामने का हिस्सा तैयार करना।

प्रथम तेल की मालिश कर फिर चाहें खड़े या बैठ कर हाथ आगे की तरफ लम्बा कर श्वास भरपूर खींच मुट्ठी बलानुसार बन्द कर लो।

अब हाथ कोहनी के पास से मोड़ते लाओ और इतना मोड़ने

का प्रयत्न करो कि मुट्ठी कन्धे से मिल जावे। इस समय तुम्हारा हाथ थरथराने लगेगा और बाजू पर एक प्रकार की पीड़ा प्रतीत होने लगती है किन्तु इसकी तरफ ध्यान न दो। यह क्रिया १० बार करनी चाहिये और एक क्रिया में दो मिनट लगने चाहिये।

पिंडली, कन्धे, कमर और बाजू के पिछले मसलस तैयार करके सीधे खड़े होकर भरपूर श्वास खींचो और दोनों हाथों को पीठ पीछे ले जाकर अंगुलियाँ लम्बी कर दो। अब एक हाथ से दूसरे हाथ को पकड़ो और बाजुओं को पूर्ण बलानुसार भीतर की तरफ झुकाओ और साथ ही साथ पैरों के पंजो पर खड़े होते जाओ और पिंडलीयों पर पूरा पूरा जोर दो।

गर्दन की कसरत

तकिये के अवलम्ब से सीधा लेटो और सिर ऊँचा उठा उसके पीछे दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर फँसा कर खोपड़ी को मजबूती से पकड़ लो, अब गर्दन को फिर तकिये पर लाने का यत्न करो किन्तु हाथों से उसे रोके रहो। यह क्रिया १० बार करना और एक क्रिया में ४ मिनट लगने चाहिये।

पेट की कसरत

६ इंच का अन्तर रख पैर सामने की तरफ फैला इस तरह बैठ जाओ कि जाँघ और पेट के बीच में समकोण बन जाय। अब गर्दन नीचे की तरफ झुका कर श्वास खींचो और बिना पीठ

मेरी व्यायाम प्रणाली

समस्त शरीर का एक ही व्यायाम

प्रथम शरीर पर तेल की मालिश कर सीधे खड़े होकर दोनों हाथों को पीठ पीछे ले जाओ और अब भरपूर श्वास खींच कर मुट्ठियां इतने जोर से बांधो कि मानो कोई तुम्हारे हाथ से कुछ छीन रहा है और तुम देना नहीं चाहते हो। अब श्वास रोकते हुये और मुट्ठियों को बलानुसार दबाते हुये आगे की तरफ इतने ऊँचे ले आओ कि मुट्ठिया एक दूसरी बगल के पास आजावें और पसलियों पर भी पूर्ण प्रभाव पड़े। इस समय जांघों और पिंडलियों को भी सामर्थ्यानुसार ऊपर की तरफ खींचते रहो और ज्यों ज्यों श्वास खींचते जाओ त्यों त्यों सम्पूर्ण शरीर का बोझ पैर की अँगुलियों पर संभालते जाओ। अब कुछ समय उसी स्थिति ही में ठहर कर और फिर हाथों को पीछे की तरफ़ ले जाते समय शरीर ढीला न कर देना चाहिये वरन् पूर्ण गठित रहना चाहिये। यह क्रिया १० बार करनी चाहिये, और एक क्रिया में दो मिनट लगने चाहिये।

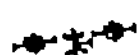
बाजू के सामने का हिस्सा तैयार करना।

प्रथम तेल की मालिश कर फिर चाहे खड़े या बैठ कर हाथ आगे की तरफ़ लम्बा कर श्वास भरपूर खींच मुट्ठी बलानुसार बन्द कर लो।

अब हाथ कोहनी के पास से मोड़ते लाओ और इतना मोड़ने

ब्रह्मचर्य पालन करने की दो प्रथाये प्रचलित हैं—एक स्वपति का स्वस्त्री और दूसरा स्त्री का पति का सर्वदा परित्याग। प्रथम बाल्यावस्था से प्रारम्भ कर यौवनावस्था तक समस्त नर नारियों को पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने की आवश्यकता है फिर यदि उनको सांसारिक विषयों में प्रवर्तित होना हो तो उसके पश्चात् स्वपति व स्वस्त्री रूपी ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना दम्पतियों का मुख्य धर्म है। कहावत भी प्रसिद्ध है—"जाकी एक नारी सो ब्रह्मचारी" हमारे प्राचीन पूर्वाचार्य जीवन की पवित्रता व ब्रह्मचर्य के रहस्य तथा अन्योपयोगी विषयों से पूर्ण परिचित होने के ही कारण दीर्घ जीवी होते थे किन्तु अब जिस समय हम भारतीयों को रोगों से आक्रान्त होते अवलोकन कर पूर्व समय और आधुनिक काल की तुलना करते हैं तो यह कहे बिना कदापि नहीं रहा जाता कि सर्व दुःखों की मूल जड़ केवल ब्रह्मचर्या भाव ही है। हम उन्हीं आदि जाति के वंशधर होकर जो किसी समय में शारीरिक मानसिक शक्तियों के प्रबल प्रताप द्वारा ही समस्त संसार में सिरमौर समझी जाती थी किन्तु आज हमें अपने सुकर्त्तव्यों से च्युत होने के ही कारण पद

ब्रह्मचर्य



"सब आश्रमों में परम पावन, ब्रह्मचर्य प्रधान है।
नर को कहो इस व्रत विना, होता कहां कल्यान है।'
जब नींव ही दृढ़ है नहीं, कैसे बने मन्दिर
जब खोखली जड़ हो गई, कैसे विटप फूले



य पाठको! आज समय,
अनेकानेक बाधाये
से प्रथम सफल होने के
प्रभावोत्पादक गूढ़
प्रत्येक भारतवासी
ब्रह्मचर्य आत्मा का
र्हात ब्रह्मचर्य अर्थात् अपने चित्त को
स्यात्मा में ही लीन रखने का ही नाम
वेद चार हैं, अवस्था चार हैं एवं आश्रम भी
श्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और
दीप्तिवान पदार्थों में सूर्य श्रेष्ठ है नक्षत्रों में
ही सर्व श्रेष्ठ है कारण
की योग्यता ब्रह्मचर्याश्रम में

ब्रह्मचर्य पालन करने की दो प्रथायें प्रचलित हैं—एक स्वपति का स्वस्त्री और दूसरा स्त्री का पति का सर्वथा परित्याग। प्रथम बाल्यावस्था से प्रारम्भ कर यौवनावस्था तक समस्त नर नारियों को पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने की आवश्यकता है फिर यदि उनको सांसारिक विषयों में प्रवर्तित होना हो तो उसके पश्चात् स्वपति व स्वस्त्री रूपी ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना दम्पतियों का मुख्य धर्म है। कहावत भी प्रसिद्ध है—"जाकी एक नारी सो ब्रह्मचारी" हमारे प्राचीन पूर्वाचार्य जीवन की पवित्रता व ब्रह्मचर्य के रहस्य तथा अन्योपयोगी विषयों से पूर्ण परिचित होने के ही कारण दीर्घ जीवी होते थे किन्तु अब जिस समय हम भारतीयों को रोगों से आक्रान्त होते अवलोकन कर पूर्व समय और आधुनिक काल की तुलना करते हैं तो यह कहे बिना कदापि नहीं रहा जाता कि सर्व दुःखों की मूल जड़ केवल ब्रह्मचर्या भाव ही है। हम उन्हीं आदि जाति के वंशधर होकर जो किसी समय में शारीरिक मानसिक शक्तियों के प्रबल प्रताप द्वारा ही समस्त संसार में सिरमौर समझी जाती थी किन्तु आज हमें अपने सुकर्त्तव्यों से च्युत होने के ही कारण पद पद पर दलित हो पराधीनता पर जीवन व्यतीत करना पड़ता है। जब कभी कोई व्यभिचारी मनुष्य किसी ब्रह्मचारी मनुष्य के मुख की तेज पूर्ण दिव्य कान्ति को अवलोकन करता है तो उस समय उसको अपने तेजहीन मलमलीन मुखाकृति पर हार्दिक दुःख अनुभव होता है। सत्य है, स्व

भावतां ब्रह्मचर्यात् भवति बलवीरता । जिस प्रकार स सरोवर पर पक्षी स्वयं आजाते हैं उसी प्रकार में बल वीरता स्वयं ही उत्पन्न होने लगती है। लिखा भी है Brahmacharya is the greatest beauty of a man and most hidden treasure It is the giver of all enjoyment, fame and happiness अर्थात् ब्रह्मचर्य ही मनुष्य का गुप्त और प्रसन्नता, यश का दाता है। परशुराम, भीष्म, भीम आदि पूर्वजो की वीर विरुद् रूपी विमल पताका ब्रह्मचर्य ही बल द्वारा अद्यावधि भूमण्डल में फहरा रही है। प्राचीन काल की बात जाने दीजिये वर्तमान युग में भी कितने ही वीर स्थित हैं कि जो ब्रह्मचर्य बल की महिमा प्रत्यक्ष प्रदर्शित कर रहे हैं। धन्य हैं भारत माता कि तेरी गोद में भीष्म भीम नाम स्मरणार्थ राममूर्ति समान वीर विराजमान हैं । इनके अद्भुत चमत्कारकारी कर्तव्यों को अवलोकन करने से हमारे नीरस हृदय पुनः नवीन अदम्य उत्साह उत्तेजित हो यही विचार होता है कि हम अपने पूर्वजो की कीर्ति को कोरा कपोल कल्पित ही न समझे वरन् उनके अनवद्य सुचरित्र चर्चाओं को चित्र रूपी चित्त पटपर अंकित कर उनका अनुकरण करें और प्रायः सुखदायक कथायें विस्मृत होने लगी हैं उनका पुनः उद्धार करने का निरन्तर उद्योग करें।

संसार में आदर्श पुरुषों का अभाव नहीं। यदि है तो केवल हम लोगों की उन्नति हितार्थ कामना सदाचरणों के ग्रहण करने की शक्ति तथा कुपथ्य से सुपथ्य पर पदार्पण कराने वाली बुद्धि

की न्यूनता है। विशेषतः एतद् समय माता पिता बच्चों के हिताहित पर कुछ ध्यान न देने पर भी अल्पायु में ही विवाहादि कर्म करने में ही अहोभाग्य समझते हैं। किन्तु जब वह मानवकर्त्तव्य से च्युत हो यौवन की ख्याति पर प्रमत्त हो अधिभौतिक एवं क्षण स्थायी तथा स्वप्न सदृश सुखों का उपयोग करने के पश्चात् जब उनकी मोह निद्रा भंग हो भविष्य को भयकर परिणाम प्रतीत होता है तो फिर अश्रु प्रवाह करने के अतिरिक्त कुछ करते धरते नहीं बन पड़ता। बाल्यावस्था में जिस मार्ग का अनुसरण कराया जाता है वे बहुधा आचरण मृत्युपर्यन्त उसके सदाचार-कदाचार रूप से आकृति और प्रकृति रूप में परिणत हो जाते हैं। संसार में अद्यपर्यन्त जितने भी वीर पुरुषों द्वारा कीर्तिकर कार्य हुये हैं वह सब एक ब्रह्मचर्य बल द्वारा ही प्राप्त हुये हैं। वही मनुष्य असाधारण उन्नति कर सकता है कि जिसका हृदय किसी भी कुवासना से मलीन न होने पर भी सर्वदा शुभ सदाचारों के साम्राज्य से परिपूर्ण रहता हो - किसी ने ठीक लिखा है—The wise man whom the arrows of beautiful women glances *do not affect and* who does not fall in the snare of evil passion conquers all the three *worlds* अर्थात् जिसके हृदय को स्त्रियों के कटाक्ष बाण नहीं भेद सकते और इन्द्रियों के विषय भोग चित्त को चञ्चल नहीं कर सकते वह धीर पुरुष तीनों लोकों को वश कर सकता है। एक वह समय था कि जब बालब्रह्मचारी भीष्म जी के ब्रह्मचर्य व्रत खण्डन हितार्थ ऋषि मुनियों ने अनेकों उपाय किये किन्तु सत्य

वर्ती भीष्म जी ने ससार की प्रपञ्चिक कामनाओं से निर्लोभी हो यो उत्तर दिया कि मुझे तीनों लोकों का सुख-त्याग स्वीकार है किन्तु सत्पथ से विमुख होना स्वीकार नहीं ब्रह्मचर्य व्रत का इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है कि स्वय रामचन्द्र जी का भाषण है कि चाहे मैं राम हूँ तो भी मुझमें मेघनाद मारने की शक्ति नहीं। उसे वही वध कर सकता है कि जिसके हृदय में १२ वर्ष तक किसी भी प्रकार का मलीन विचार उत्पन्न नहीं हुआ हो। परन्तु आज समय काम किंकर चपलता की चपल चाल तथा मन लुभावनी हिय हुलसावनी सुन्दर सलोनी छवि की छटा कामातुर हो केल कलायें करने का बाजारों की बाद वनिताओं व वारुणी के रंग में रंजित होने ही में अमित आनन्द अनुभव करते हैं किन्तु यतद् कार्य तत्परता तथा बुद्धि विलक्षणता नहीं वरन् मूढ़ता और अदूर दर्शिता का ही द्योतक है। संसार में वीरोचित गुणों की जड़ जमाने वाला तथा सहन शीलता आदि भावों का आविर्भाव करने वाला यदि कोई है तो केवल ब्रह्मचर्य ही है। चाहे तुम किसी भी अवस्था के हो और चाहे सर्वशक्तियों को नष्ट कर चुके हो तथापि इस अमोघ शक्ति से तुम्हारे मलीन मुखाकृति पर पुनः प्रतिभा पूर्ण प्रसन्नता की रेखायें प्रकट होने लगे गी। ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने के लिए न धन की न समय की ही आवश्यकता है। हाँ, यदि है तो केवल दृढ़ प्रतिज्ञा की। आज से ही प्रतिज्ञा करो कि मैं वीर्य-रक्षा कर शक्तिशाली होऊँगा। ब्रह्मचर्य की विपुल आँधी के सामने कुचेष्टाओं का अमना तथा निर्बलता का वृक्ष स्थिर रहना असम्भव है। तुम्हें उचित है

के तुम सदैव इस बात का स्मरण रक्खो—I fear no disease for I am so strong that I cannot be attacked by disease अर्थात् मैं किसी भी रोग से भयभीत नहीं होता कारण मैं इतना बली हूँ कि कोई व्याधि मेरे निकट नहीं आसकती। हे स्वदेश सेवी, सच्चे सपूतो! यह विषय विचारनीय है कि जब हम में न बल है, न साहस, न तेज, न टांगों में चलने और भुजाओं में तलवार पकड़ने की शक्ति है तो फिर हम राजमदान्ध मनुष्यों पर शौर्य स्थापित कर भारत को पराधीनता से किस भाँति मुक्त कर सकते हैं। प्रत्येक भारतवासी को उचित है कि वह सब से प्रथम शारीरिक सम्पत्ति का सुधार करें न कि उनकी शारीरिक स्थिति दिन दिन निस्तब्ध होती जाय। यदि हमारे नवयुवक भारतीय राष्ट्र उन्नति हितार्थ मित्रमण्डलियाँ नियत कर इसी प्रकार की सद्वृत्तियों का सर्वदा सर्वत्र प्रचार करते रहें तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।



वीर्य



रीर पोषण तथा बुधि हितार्थ हम जिन खाद्य पदार्थों का सेवन करते हैं तो उन सब के सार को वीर्य कहते हैं। शरीर में रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि यह सात धातु हैं और वीर्य इन सबों का सार और प्रधान तत्व है। वीर्य के होने के ही कारण हमारे शरीरस्थ बल प्रताप पराक्रम और ऐश्वर्य आदि मंगलीक बातें अस्त-व्यस्त होगई। अधिकांश मनुष्य यह विचार कर कि हमारे वीर्य में न्यूनता तथा निर्बलता व्याप्त हो गई है वैद्यों व डाक्टरों की शरण जा कामोत्तेजन औषधियों के पीछे हाथ धोकर पड़ जाते हैं किन्तु साथ में ही वीर्य नाश का प्रवाह और भी वर्धित वेग से आरब्ध रहता ही है। अन्त में उन पर यह कहावत चरितार्थ होती है कि ज्यों ज्यों दवा की त्यों त्यों मर्ज बढ़ता ही गया। मनुष्य वीर्य के महत्व को न ही जानने ही के कारण मनमाने कुकर्मों से नष्ट कर बैठते हैं। अब उन्हें इस लेख से ज्ञात हो जायगा कि वीर्य किन वस्तुओं का मुख्य तत्व है जीवन और शरीर का प्रधान अंग क्यों है? प्रथम ही प्रथम रस नामक धातु पित्त की उष्णता से सुपक्व होकर रक्त बनता है। तत्पश्चात् अग्नि की

ष्णता से मास और फिर यही मांस वायु अग्नि से सम्मिलित
ो कफ के आश्रय से स्थिर हो जाता है कि जिसे मेद कहते
। अग्नि वायु आदि महा भूतों का समूह उस मेद में कठोरता
त्पन्न करता है कि जिसे हड्डी कहते हैं। हड्डी में मेद भर जाता
और मेदोमय स्नेह को मज्जा कहते हैं कि जिसमें से स्निग्ध
दार्थ उत्पन्न होता है जिसे वीर्य कहते हैं। यह वीर्य हड्डियों के
सूक्ष्म छिद्रों में से रस रस कर समस्त शरीर में व्याप्त हो पुष्टता
दान करता है। जब मनुष्य कामासक्त होता है तो उस समय
ुप्त द्वारा पतन हो जाता है।

अब हमें मैथुन के विषय में विचार करना उचित है। कारण
ही वीर्यपात का मुख्य द्वार है। प्रथम तो मनुष्य को यही उचित
कि मनोवृत्तियों को दमन कर सर्वदा पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन
रे ताकि शरीर पुष्टि और अवयव वृद्धि को प्राप्त हो। दूसरे
दि कभी कामासक्ति हो, असमर्थ हो जाय तो उसे उचित
कि वह अत्यन्त सावधानता पूर्वक संवेग च्युत से सम्प्रयो
न कामवेग को शान्ति करे। किन्तु सखेद लिखना पड़ता है
के एतद् समय के कामी जनों ने प्राकृतिक अटल नियमों का
ल्लंघन कर स्वयं सिद्ध वीर्यपात नवीन प्रणाली प्रचलित कर
खी है।

भारत के वह प्यारे सपूत जिन्हें वीर्य शब्द के अर्थ का ज्ञान
ी नहीं और न उनके शरीर में अद्यावधि वीर्य का पूर्ण प्रादुर्भाव
ी हुआ है तथापि इस कुक्रिया के पूर्ण अनुभवी हैं। स्त्री-सम्भो-
गातिरिक्त अन्य साधनों से वीर्यपात करना नित्य कर्म है।

की नोक पर चढ़े इतने से वीर्य को यदि अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा करे तो उसमें असंख्य जीवन-तत्व विदित होते हैं। एक भाग वीर्य चालीस गुणा रक्त के बराबर होता है। अतियोग प्रवाह में निमग्न होने के पश्चात् जो बालक उत्पन्न होकर अल्प वयस्क ही मर जाय तो कोई आश्चर्य का विषय नहीं कारण जो जीवन तत्व उसको मिलना उचित था वह तो उसके माता पिता के अतियोग में प्रथम ही नष्ट हो चुके। सत्य है—मरणं बिन्दु पातेन जीवन बिन्दु धारणात्।" तुम्हारे शरीर में प्रधान वस्तु वीर्य ही है और जो कुछ भी तुम तेज बल वीरता तथा कान्ति शरीर में धारण करते हो वह वीर्य की ही कृपा है अतः इसका भूल कर भी क्षणिकानन्द हितार्थ दुरुपयोग न कर डालो।

रक्त

रक्तगति बन्द हो जाने पर जीवन रूपी दीपक तत्क्षण क्षीण हो जाता है अथवा यों कहिये कि रक्त ही प्राणधार प्रवाही पदार्थ है। सम्पूर्ण शरीर में गर्मी तथा पुष्टता प्रदान करना रक्त का ही मुख्य काम है और शरीरस्थ समस्त धातुओं की क्षयपूर्ति रुधिराधीन ही है। हमारी आँतों के अन्दर बड़ी जालियाँ होती हैं और फिर उनके चारों तरफ सहस्रों छोटी छोटी रस रक्त वाहिनी नलियाँ स्थित हैं जो अन्नादि पदार्थों से रक्त बनने योग्य सार को आकर्षित करती हैं। यह सार प्रथम तो दुग्ध समान श्वेत है किन्तु कुछ समयान्तर यकृति में उष्णता प्राप्त होने पर स्वरूप हो जाता है।

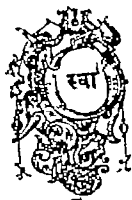
जो रक्त हृदय से फेफड़ों में साफ होने के लिये आता है उसमें प्रति सैकड़ा दसवाँ भाग आक्सिजन और छयालीसवाँ भाग कारबोनिक एसिड गेस होती है। जो रक्त फेफड़ों से साफ होकर हृदय में वापिस आता है उसमें बीस भाग आक्सिजन और उन तालीस भाग कारबोनिक होता है। यह अधिकांश आक्सिजन हृदय से सब अङ्गों में अग्नि पैदा करता है और कुछ भाग उसका फिर फेफड़ों में कारबोनिक एसिडगेस अस बन कर लौट आता है। जिस रक्त में पानी अधिक सम्मिलित होता है तो ऐसा रक्त अशुद्ध समझना चाहिये और जो रक्त तादाद से ज़्यादा गाढ़ा हो तो वह भी जिस अंग में होगा उसी स्थान में भारीपन और सुस्त कर देता है। अस्तु ज्ञात होता है कि रुधिर की समता पर रहना ही लाभप्रद है। जब रुधिर किसी कारण एक जगह इकट्ठा हो जाय तो उस जगह दर्द या भारीपन मालूम होने लगता है तब उसकी चिकित्सा जौंक या पलस्तर लगा कर, मालिश या शारीरिक व्यायाम द्वारा रुधिर पतला कर देना ही एक उत्तम चिकित्सा है क्योंकि रुधिर पतला होने से उसकी आमद शुद्ध हो जाती है। इकट्ठा हुआ रक्त यदि उक्त बातों से भी उचित दशा में न आये तो गर्म पानी की भाप देना या गर्म पानी से सेकना अति उत्तम होता है। रुधिर की अधिकता से ही समस्त रोग उत्पन्न होते हैं, और रुधिर खराब होता है दूषित पवन से। अस्तु, हमें उचित है कि हम सब से प्रथम पवन का पूर्ण प्रबन्ध रक्खे।

प्राणायाम



Do not breathe through the mouth, as mouth was not created for breathing purposes, Practise deep breathing through nose, as deep breathing purifies the blood and removes all impurities from it. Deep breathing is the best promotor of health.

Dr Z.



स को यत्न पूर्वक बाहर फैंक स्थिर रख कर फिर धीरे धीरे प्राणवायु को भीतर खींचते जाना और जब फैफड़े पवन से परिपूर्ण हो जायें और प्राणवायु अधिक अन्दर प्रवेश न कर सके तब यथाशक्ति पवन को रोक रखने का ही नाम प्राणायाम है। स्वास को बाहर रोकने का नाम कुम्भक, बाहर फैंकने का नाम रेचक, भीतर भरने का नाम पूरक, और भीतर रोकने का नाम अभ्यन्तर कुम्भक है। प्राणायामाभ्यासी को उचित है कि क्षुद्र जीव-जन्तुओं से निर्वासित कण्टका कीर्ण रहित शून्य सम भूमि भाग पर आसन लगा प्राणायाम करे। प्राणायाम करते समय श्वास मुख द्वारा न ले कर नासिका द्वारा ही लेना योग्य है कारण मुख द्वारा लेने से यदा कदा एक दम शीतल पवन ... में प्रवेश हो जाने से निमोनियां आदि रोगों का भय रहता

है। नासिका के अभ्यन्तर भाग की त्वचा अति सूक्ष्म होती है और उसके पीछे सदैव उष्ण रक्त का सचार होता रहता है। अतः शनै शनै पान किया हुआ पवन चाहे कितना ही शीतल क्यों न हो तो भी नासिका में प्रवेश करते ही कवोष्ण होने लगता है। जिस प्रकार अग्नि में स्वर्ण आदि धातुओं के तपाने से मल नष्ट हो निर्विकार हो जाते हैं एव प्राणायामाभ्यासी के प्रतिक्षण उत्त-रोत्तर काल में अशुद्धि का नाश ज्ञान का प्रकाश प्रसन्न मुख तथा जितेन्द्रियता होती है। प्राणायाम द्वारा रक्त रोग, फैफड़ों के रोग, सग्रहणी तथा क्षय समान भयकर रोग भी निवारण किये जा सकते हैं। लिखा भी है कि Breathing is the best promotor of life कन्धो को गोल कर नीचे को लटका दो और श्वास सम्पूर्ण निकाल पेट अन्दर की तरफ दबा दो ऐसी स्थिति में तुम पूर्ण प्राणायाम कदापि नहीं कर सकते हो।

प्राणायामाभ्यासी को उचित है कि प्राण वायु बाहर निकलते समय नाभी के नीचे मूल चक्र और गुदा चक्र को ऊपर की तरफ़ आकर्षण करे। रेचक करते समय दोनो स्कन्ध नीचे को झुकजाते हैं। पसलियाँ तथा नाभी के आसपास का उदर भाग अन्दर की तरफ़ बैठ जाता है और जितना अधिक खींचोगे उतना ही अधिक अपान पवन बाहर निकलेगा। अब यत्नानुसार ठहर कर श्वास फिर भीतर की तरफ़ खींचना चाहिये कि जिसे पूरक कहते हैं। साधा-रण श्वास लेते समय फैफड़ों का छुटा भाग कार्य करता है किन्तु पूर्ण प्राणायाम कि जिससे सुषुम्ना उत्पन्न होने लगे तो उस समय सम्पूर्ण फैफड़े कार्य में तत्पर हो जाते हैं। सुषुम्ना हृदय के



श्रीमान् प्रो० राममूर्ती जी इन्डियन हरक्यूलीज (कलयुगी भीम) ।

KRISHNA PRESS, ALLAHABAD

भारतीय पहलवान

थे भीम तुल्य महाबली अर्जुन समान महारथी।
श्रीकृष्ण लीलामय हुये आप जिनके सारथी॥
उन पूर्वजों की कीर्ति का वर्णन अतीव अपार है।
गाते हमी गुण हैं न उनके गा रहा संसार है॥

— भारत-भारती।



निस्सन्देह हमारे भारत की मल्लविद्या पुरातन-काल से चली आती है और ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में सर्वोत्तम समझी जाती थी किन्तु आजकल अल्पाहारी मनुष्यों का काल प्रारम्भ होगया है। यों तो कितने ही M A LL. B की पदवी प्राप्त कर लेते हैं किन्तु यदि किसी समय हमको शत्रु का सामना अथवा कोई शारीरिक परिश्रम करना पड़े तो उस समय उनकी पेण्टकोट व्यर्थ ही जायगी और जो शक्तिशाली होगा वह अपने शत्रु पर विजय प्राप्त कर लेगा। किसी ने सत्य कहा है कि A strong man does not care for any one अर्थात् बलवान् मनुष्य किसी की भी परवा नहीं करता है। संसार में सच्चावीर वही है कि जिसके कर्तव्यों पर संसार मुग्ध हो वीर की पदवी से भूषित करे। भारत वासियों ने

कुश्तियों में, बड़े बड़े नाम पाये हैं और किसी समय में यह कला अत्यन्त प्रशंसनीय समझी जाती थी किन्तु अब केवल नाम मात्र के दो-चार पहलवान रह गये हैं कि जिनकी मृत्यु के बाद इस कला के लुप्त हो जाने का भय है। आज समय युयुत्सु नामक जापानी कुश्ती की इतनी प्रशंसा हो रही है किन्तु यह कोई नवीन बात नहीं वह तो हमारे व्यायाम की केवल एक शाखा-मात्र है।

कई वर्ष पूर्व जब पेरिस में प्रदर्शन हुआ था कि जिसमें प्रयाग के देशभक्त मोतीलालनहरू के साथ गुलाम आदि कितने ही पहलवान पेरिस गये और वहाँ मादर अली नामक तुर्की पहलवान से गुलाम की कुश्ती निश्चय हुई। गुलाम ने प्रत्येक घातों में अपने प्रतिस्पर्धी को विजय किया। सन् १६०६-१० में बेञ्जमिन साहब गामा और इमाम-बक्स नामक पहलवानों को भारत से लिवा ले गये और अमेरिका के प्रसिद्ध पहलवान रोलर के साथ गामा की और स्वीटजरलैन्ड के पहलवान सेम के साथ इमामबक्स की कुश्ती हुई। दो लाख रुपया एकत्र कर प्रतिज्ञा-पत्र अंकित किया गया। गामा ने रोलर को २० मिनट में तथा इमाम ने सेम को १२ मिनट में चित कर दिया कि जिसे अवलोकन कर योरप ने दाँतों तले उँगली दबाई और गुलाम को पंजाब-केशरी तथा इमाम को नर व्याघ्र की उपाधि से भूषित करना पड़ा। इस विजय के उपलक्ष में पुरस्कार के गुलाम को १५ हजार तथा इमाम को ७ हजार नगद एव प्रेक्षकों की टिकटों की आय में से हिस्सा मिला। इसके कुछ समयान्तर फिर

आस्ट्रीया के पहलवान विस्को से गामा की कुश्ती हुई। विस्को गामा की अपेक्षा कहीं अधिक मोटा था। अतः प्रतिज्ञा पूर्ण न कर सका तथापि पौने तीन घण्टे उसे नीचे दबाये रखा। कुश्ती पूर्ण न होने कारण पुन दूसरे दिवस होनी निश्चय हुई किन्तु इसके पूर्व ही विस्को अस्वीकार कर कहीं चला गया। पश्चात् गुलाम के भाई इमाम बक्स और आयर्लैण्ड के पहलवान पैटफगोली की कुश्ती हुई कि जिसमें हाथ पकड़ते ही इमाम ने पैट को जमीन पर दे मारा। बहुत दिनों की बात है कि जगद्-गुरु पहलवान टामकेनन दिग्विजय के लिये फिरते फिरते जब कलकत्ते आया तो उस समय कूचबिहार के राजा नृपेन्द्र नारायण भूप बहादुर वहीं पर थे। उन्होंने टाम के साथ गुलाम के चेला रहीम को लड़ाया। इस कुश्ती में रहीम जीता, किन्तु तो भी यह विख्यात अंग्रेज पहलवान अपराजित ही माना गया। द्वारा सन् १९१२ में बेञ्जमिन साहब, प्रो० राममूर्ति तथा अन्य ...लह पहलवानों को विलायत ले गये। किन्तु जब से गामा विलायत गया था तब से वहाँ के निवासी भयभीत हो चुके थे ...तः कोई भी भिड़ने को उद्यत न हुआ। कुछ समय पश्चात् ...ंस और स्विटजरलैण्ड के प्रसिद्ध पहलवान मारिस डिरयाज़ ...े लंडन लड़ने आया अहमद बक्स ने प्रथम बार कुछ सैकंड में ...र दूसरी बार १ मिनट में जमीन दिखा दी कि जिसे अव-...कन कर समस्त योरप को विस्मित होना पड़ा। पश्चात डिर-...ज के मेनेजर अरमण्ड कारमिलेण्ड के प्रसिद्ध पहलवान को ...ाकर अहमद बक्स से भिड़ाया किन्तु अहमद बक्स ने उसे भी

कुश्तियों में, बड़े बड़े नाम पाये हैं और किसी समय में यह कला अत्यन्त प्रशंसनीय समझी जाती थी किन्तु अब केवल नाम मात्र के दो-चार पहलवान रह गये हैं कि जिनकी मृत्यु के बाद इस कला के लुप्त हो जाने का भय है। आज समय युयुत्सु नामक जापानी कुशती की इतनी प्रशंसा हो रही है किन्तु यह कोई नवीन बात नहीं वह तो हमारे व्यायाम की केवल एक शाखा-मात्र है।

कई वर्ष पूर्व जब पेरिस में प्रदर्शन हुआ था कि जिसमें प्रयाग के देशभक्त मोतीलालनहरू के साथ गुलाम आदि कितने ही पहलवान पेरिस गये और वहाँ मादर अली नामक तुर्की पहलवान से गुलाम की कुशती निश्चय हुई। गुलाम ने प्रत्येक बातों में अपने प्रतिस्पर्धी को विजय किया। सन् १९०९-१० में बेञ्जमिन साहब गामा और इमाम बक्स नामक पहलवानों को भारत से लिवा ले गये और अमेरिका के प्रसिद्ध पहलवान रोलर के साथ गामा की और स्वीटजरलैन्ड के पहलवान लेम के साथ इमामबक्स की कुशती हुई। दो लाख रुपया एकत्र कर प्रतिज्ञा-पत्र अंकित किया गया। गामा ने रोलर को २० मिनट में तथा इमाम ने लेम को १२ मिनट में चित कर दिया कि जिसे अवलोकन कर योरप ने दाँतों तले उँगली दबाई और गुलाम को पञ्जाब-केशरी तथा इमाम को नर व्याघ्र की उपाधि से भूषित करना पड़ा। इस विजय के उपलक्ष में पुरस्कार के गुलाम को १५ हजार तथा इमाम को ● हजार नगद एवं प्रेक्षकों की टिकटों की आय में से हिस्सा मिला। इसके कुछ समयान्तर फिर

आस्ट्रीया के पहलवान विस्को से गामा की कुश्ती हुई। विस्को गामा की अपेक्षा कहीं अधिक मोटा था। अतः प्रतिज्ञा पूर्ण न कर सका तथापि पौने तीन घण्टे उसे नीचे दबाये रखा। कुश्ती पूर्ण न होने कारण पुन दूसरे दिवस होनी निश्चय हुई किन्तु इसके पूर्व ही विस्को अस्वीकार कर कहीं चला गया। पश्चात् गुलाम के भाई इमाम बक्स और आपली एड के पहलवान पैटक्गोली की कुश्ती हुई कि जिसमें हाथ पकड़ते ही इमाम ने पैट को जमीन पर दे मारा। बहुत दिनों की बात है कि जगद्-गुरु पहलवान टामकेलन दिग्विजय के लिये फिरते फिरते जब इलाके में आया तो उस समय कूचविहार के राजा नृपेन्द्र नारा यण भूप बहादुर वहीं पर थे। उन्होंने टाम के साथ गुलाम के पेता रहीम को लड़ाया। इस कुश्ती में रहीम जीता, किन्तु तो भी वह विख्यात अंग्रेज पहलवान अपराजित ही माना गया। द्वारा सन् १६१२ में बेंजमिन साहब, प्रो० राममूर्ति तथा अन्य सोलह पहलवानों को विलायत ले गये। किन्तु जब से गामा वेलायत गया था तब से वहाँ के निवासी भयभीत हो चुके थे त कोई भी भिड़ने को उद्यत न हुआ। कुछ समय पश्चात् ास और स्विटजरलैण्ड के प्रसिद्ध पहलवान मारिस डिरयाज़ ी लड़न लड़ने आया अहमद बक्स ने प्रथम बार कुछ सैकंड में ार दूसरी बार १ मिनट में जमीन दिखा दी कि जिसे अव-ाकन कर समस्त योरप को विस्मित होना पड़ा। पश्चात डिर-ज के मेनेजर अरमण्ड कारमिलैन्ड के प्रसिद्ध पहलवान को ाकर अहमद बक्स से भिड़ाया किन्तु अहमद बक्स ने उसे भी

चार मिनट में चित्त कर दिया सन् १९१३ में मारिस डिरयाज़ के प्रयत्न से पेरिस में पहलवानों का सम्मेलन हुआ। जिसमें डिरयाज़ को Middle weight champion की पदवी प्राप्त हुई कि जिससे सिद्ध होता है कि यूरोपियन की गुरु सवथा एक दुर्भेय वस्तु है। अब इगलैण्ड में कोई भी लड़ने को उद्यत न हुआ तब वह सब निराश हो फ्रांस गये और वहाँ मारिष गाबियाँ आदि पचास पहलवानो को परास्त कर अमरीका इस आशा से गये कि हम ससार के सर्वश्रेष्ठ पहलवान फ्रैंकगोल के साथ कुश्ती लड़ेंगे किंतु फ्रैंक ने अस्वीकार कर दिया तब विस्को के साथ काली नाम भारतीय पहलवान की कुश्ती हुई। दो वर्ष बाद फिर बाबू यतीन्द्र मोहन उर्फ गोबर विलायत गया और उसकी व्यायाम पद्धति की कितने ही समाचार-पत्रो को प्रशसा करनी पड़ी। गोबर ने पश्चिमवर्ग के ज़िस्के केम्पवेल और जिमि ईशन नामक दो पहलवानों को हराया। ईशन ने पहली कुश्ती में हार खा दूसरी कुश्ती में गोबर के मुक्का मारा ऐसा करने का निषेध होने के कारण पचों ने कुश्ती बन्द करादी और हार ईशन के नाम लिखी गई, गोबर को इस कुश्ती में साढ़े बारह हज़ार रुपये तथा प्रेक्षकों की टिकटों की बिक्री में से हिस्सा भी मिला। तत्पश्चात् गोबर ने फ्रांस के दो पहलवानों को हरा कर गोच के साथ लड़ने की इच्छा प्रगट की किन्तु गोच ने अस्वीकार कर दिया। गोच ने अमेरिक्स नाम के पहलवान को अपने स्थान पर स्थापित कर दिया किन्तु इस अमेरिक्स को आइरिश पहलवान पैट कानली ने और इसको इमाम बक्स ने हरा दिया था।

इतने पर भी भूमण्डल का प्रसिद्ध इमाम बेचारा किस गिनती में ? कारण ? राष्ट्रीय सम्बन्धी !

राममूर्ति

प्रो० राममूर्ति की जन्म-भूमि मद्रास प्रान्त विजया नगर में है। आप के पिता का नाम रायबहादुर नारायण स्वामी था। प्रो० राममूर्ति की छाती ४८ इंच चौड़ी है परन्तु प्राणायाम करने से ५६ हो जाती है। कद ५ फीट ६ इञ्च है। वजन ढाई मन है। एक समय आप योरुप की प्रदर्शिनी में शारीरिक शक्तिशाली कर्त्तव्य प्रदर्शित कर इस बात का परिचय दे रहे थे कि एक भारतीय सन्तान कैसे कैसे आश्चर्यप्रद कार्य कर सकता है। एक दिन अन्तिम खेलहाथी का था कि अकस्मात् छाती के ऊपर का तख्ता टूट जाने के कारण कलेजे के ऊपर की हड्डी में भारी आघात पहुँचा। अतः आप को पुन स्वास्थ्य सुधार हितार्थ भारत वापिस आना पड़ा। आप को केवल योरप से ही नहीं वरन् अमेरीका आदि अन्य देशों से भी निमन्त्रण पत्र प्राप्त हुये थे। अधिक समय न मिलने पर भी आप ने योरप के समस्त पहलवानों को ललकारा था किन्तु केवल स्विटजरलैण्ड के दो पहलवान डोरीया और चेरीपिलाड नाम के पहलवानो ने सम्मुख आने का साहस किया। इनसे आप के चेले भिड़ गये, और लंदन ही में विजय प्राप्त की। आप ने स्वय सैन्डो से लड़ने का आवाहन दिया किन्तु सैन्डो ने अस्वीकार कर दिया। आपका कथन है कि स्पेन फ्रान्स योरो आदि में एक अत्यन्त महाक्रूर आमोद प्रमोद मनाया जाता है। वह यह है कि "एक

साँड को कुछ समय तक अन्धकार में बन्द कर पागल कर देते हैं और फिर वह अखाड़े में लाया जाता है तब एक घुड़सवार नग्न तलवार द्वारा उसके टुकड़े टुकड़े कर डालता है। मैं उस समय वहीं उपस्थित था। अतः मुझसे यह नीच कर्म न देखा गया तब मैंने अखाड़े में खड़े होकर कहा कि यदि कोई इतने मनुष्यों में सच्चा वीर है तो इस साँड को शस्त्र-विहीन होकर रोके किन्तु किसी का भी साहस न हुआ। तब फिर मैंने कहा कि यदि आप सब यह प्रतिज्ञा करें कि हम फिर इस क्रूर खेल में सम्मिलित न होंगे तो मैं इसको सींग पकड़ कर बिल्ली सा डरपोक बना दूं, परन्तु किसी ने प्रतिज्ञा न की और न मुझे अपनी शक्तिप्रदर्शित करने का अवसर ही प्राप्त हुआ। लोहे की मोटी जंजीर तोड़ना, दो मोटरों को एक साथ रोकना, दो गाड़ियों को आदमियों से भर छाती पर से उतारना, ५० मन का पत्थर छाती पर रखना आदि बलकारी कर्तव्यों पर आपको बड़े बड़े योग्य मनुष्यों द्वारा दो सौ से भी अधिक स्वर्ण पदक प्राप्त हो चुके हैं। आपके कार्य मनमोहक हैं एवं आपकी जीवनी भी शिक्षाप्रद है।

मिस ताराबाई

आज ऐसा कौन मनुष्य होगा जो ताराबाई के कर्तव्यों को न सुन चुका हो। ताराबाई का जन्म अजमेर में हुआ था और बाल्यावस्था में ही माता पिता के स्वर्गवास हो जाने के कारण वह सर्व भाँति अनाथ होगई अतः वह सहायता हितार्थ अपने किसी सम्बन्धी के निकट बड़ौदा चली गई। मकान के पास ही एक अखाड़ा था कि जिसमें कुश्ती होते देख इन्हें भी

रुचि उत्पन्न हुई और आज निरन्तर अभ्यास द्वारा यह यश और कीर्ति प्राप्त कर ली कि जिससे प्रत्येक भारतवासी, यह कहने का साहसी हो सकता है कि जब हमारी स्त्री-समाज की यह कथा है तो फिर पुरुष-समाज की क्या बात! यह अपनी अनुपम शक्ति द्वारा अद्भुत कार्य कर दर्शकों को सम्मोहित कर देती हैं। यथा बड़े भारी पत्थर को सिर के बालों द्वारा उठाना। भालों पर बिना किसी अवलम्ब के सोना तथा ३० मन के पत्थर को छाती पर रखना आदि शक्तिशाली कार्य इनके बायें हाथ का खेल हैं। इतना अविरल परिश्रम करने पर भी मुख पर रंच मात्र श्रान्ति के चिन्ह नहीं होते और प्राचीन वीर नारियों का सहसा स्मरण हो आता है। इसमें सन्देह नहीं कि भारत तथा स्त्री समाज हित यह गौरव का विषय है कि सर्व प्रकार परावलम्बन पंक से परिपूर्ण होने पर भी मिस ताराबाई सदृश वीर स्त्रियाँ स्थित हैं।



शरीर रचना



शरीर से पुण्यपरोपकार, शरीर ही है गुण का अगार।
शरीर ही है सुर लोकद्वार, शरीर ही से सुविचार सार॥
शरीर ही से पुरुषार्थ चार, शरीर की है महिमा अपार।
शरीर रचना पर ध्यान दीजे शरीर सेवा सब छोड़ कीजे॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी।



हम अब समस्त शारीरिक अंग और प्रत्यंगों का वर्णन करते हैं क्योंकि शारीरिक अवयवों का ज्ञान हुये बिना मनुष्य शारीरिक व्याधि का निर्णय नहीं कर सकता। नर-कंकाल के अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि समस्त शरीर केवल अशुद्ध और कुरूप अस्थियों का ही ढाँचा है परन्तु ईश्वर ने इसे अन्य प्राकृतिक वस्तुओं जैसे त्वचा, मांस अस्थि आदि से ऐसा सुसज्जित किया है कि जिसका वर्णन करना असाध्य है। हम अब संक्षेप रूप से शरीर के कुछ अंगों की रचना का वर्णन करते हैं कि जिनके विषय में थोड़ा बहुत जानना प्रत्येक मनुष्य का धर्म और कर्त्तव्य है।

सब से प्रथम शरीर के गुप्त व आन्तरिक स्थानों के रक्षार्थ ढकन के समान ईश्वर ने त्वचा बनाई है। त्वचा ही हमारे शरीर को सर्दी गर्मी से बचा कर हमें तुरन्त सूचना देती है कि हमें किस वस्तु की आवश्यकता है या होगी और उस वस्तु का

उपयोग ठीक है या नहीं यदि अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखा जाय तो मनुष्य के शरीर में छोटे छोटे हजारों रेशेदार कोष्ट चक्र दृष्टिगोचर होते हैं। इन चक्रों का आकार अनुमान से १/१०० इंच होता है। शरीरस्थ मज्जा, मांस, मेद रक्त आदि धातु इन्हीं चक्रों से बने हैं, और इनमें एक प्रकार का बेरङ्ग दानेदार गूदा भरा रहता है जिसे पञ्जल कहते हैं। यही वस्तु जीवन का मुख्य सार है। यह छोटे छोटे चक्र परस्पर मिल कर पाँच प्रकार के मसाले उत्पन्न करते हैं। १—रक्त २—कौषिककला ३—संयोजक ४—पेशिक मसाला ५—स्नायविक मसाला। पेशिक मसाला पेशियों के चक्रों के मिलने से बना है और शारीरिक अवयवों का हरकत करने में सहायता पहुँचाना इसका मुख्य काम है। अनुमान और स्थानानुसार त्वचा की मोटाई १/१२ से १/८ इञ्च तक मानी गई है। स्वच्छ वायु का रोम कूपों द्वारा अन्दर प्रवेश करना तथा शरीरस्थ विषैली हानि कर गेस को पसीने के रूप में निकालना और छोटी छोटी असख्य नसों की रक्षा करना केवल त्वचा का ही प्रथम कार्य है। हमारी त्वचा में असंख्य बाल से भी पतली नसें जाल की भाँति फैली हुई हैं कि जिन में रात दिन उष्णरक्त का सचार होता ही रहता है जो जीवन को सजीव रखने के लिये अति आवश्यक विषय है।

इसी से सारा शरीर ढका हुआ है। सर्दी गर्मी का त्वचा द्वारा ही ज्ञान होता है। सारी त्वचा सूक्ष्मछिद्रों से परिपूर्ण है जिन्हें रोमकूप कहते हैं। एक रुपये के समान वर्तुलाकार स्थान में सैकड़ों रोमरेश होते हैं। वैद्यक शास्त्र में त्वचा अग्निभासनी, लोहिता,

श्वेता, ताम्रा, वेदनी, लोहिता, और मांस धरा आदि सात प्रकार की मानी गई हैं। मगर अंग्रेजी में केवल क्याकेल, और ट्रूस्किन दो प्रकार की मानी गई हैं। जब शरीर के किसी भी स्थान की त्वचा गल जाती है तो फिर दूसरी बार स्वयं नवीन त्वचा आ जाती है। यह रोमकूप शरीर में कहीं अधिक और कहीं कम होते हैं। अनुमान से माना गया है कि समस्त शरीर में रोमकूप भी करोड़ पचास लाख के लगभग होते हैं। यह रोमकूप शरीर के उपचर्म की तह में होते हुये चर्म के उस भाग से नीचे भाग में जाकर और परस्पर मिल गाठे बन जाती हैं जिन्हें स्वेद-ग्रन्थि के नाम से पुकारते हैं। इनमें एक प्रकार का वे रक्त गूदा भरा रहता है जिसे पलल कहते हैं और जो जीवन का मुख्य सार है। यह छोटे छोटे चक्र परस्पर मिल कर पाँच प्रकार के मसाले तैयार करते हैं।

रक्त

मनुष्य शरीर में केवल रक्त ही जीवन सार है। इसी की कृपा से अस्थिया निर्मित हैं, केश रचा होती है, अथवा यों कहिये कि इसी के गतिमान रहने से जीवन स्थिर रह सकता है। रक्त दूषित होने पर नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। रुधिर धमनियो द्वारा लौटता है उस समय उसका रंग श्याम रंग होता है और फिर वह अपनी मलीनता फुफुस में जाकर वायु को देता है तब वायु उसे पुन शुद्ध कर हृदय में भेजती है और वहाँ, पुनः धमनियों उससे अपना पूर्ववत् काम लेती हैं। रुधिर शुद्ध करने का सर्वोत्तम उपाय केवल प्राणायाम है क्योंकि अधिक श्वास के फड़े

और हृदय में प्राणायाम द्वारा ही प्रवेश कर सकता है। हृदय के दोनों तरफ दो कोठरियां बनी हुई हैं। जिनमें से एक में अशुद्ध रक्त एकत्र हो दूसरे में धीरे धीरे शुद्ध होने के वास्ते जाता रहता है और वहाँ से शुद्ध हो समस्त शरीर में धमनियों और स्नायुओं द्वारा फैलता और चक्कर काटता रहता है। दोनों कोठरियों में अनुमान से तीन तीन छटाक रुधिर आ सकता है। डाक्टरों का कथन है कि नाड़ी की गति अनुसार एक मिनट में इस कोठरी में से १२५ छटांक रुधिर आता जाता रहता है। देखो, ईश्वर की महिमा। कितना शक्तिशाली एंजिन हमारे शरीर में रख छोड़ा है परन्तु शोक के साथ लिखना पड़ता है कि हम उसका उपयोग उचित रीति से करना नहीं जानते।

मांस

शरीर के समस्त रिक्त स्थानों में भरा हुआ है और जो स्थान खाली है वहाँ अस्थियां, स्नायु और रक्त भरा रहता है। माँस के ऊपर एक तह मेद् का और भी रहता है। यह पौष्टिक पदार्थों के खाने से अधिक उत्पन्न होता है। परन्तु इसके अधिक उत्पन्न होने से शरीर निर्बल, पेट बाहर को निकल आता है।

अस्थि

आयुर्वेदान्तानुसार शरीर में मुख्य अस्थियाँ केवल ३६० मानी गई हैं मगर अङ्गरेजी में २४० मानी जाती हैं। इनके अतिरेक और भी जैसे आँख, जिह्वा, नासिका आदि स्थानों में तो तमी छोटी छोटी हड्डियाँ हैं कि जिनका गिनना मनुष्य सामर्थ्य

पाहर है। अस्थियों तथा मोड़ के स्थान जैसे कोहनी, कन्धा, घुटना आदि स्थानो में भी एक प्रकार का पीतवर्ण का स्नेह भरा रहता है जिसको मज्जा कहते हैं। यदि यह वस्तु अस्थियों तथा ओड़ों में न होती तो संघर्षण द्वारा हड्डियाँ ढीली पड़ जातीं या शरीर का कोई भाग मुड़ ही नहीं सकता वरन् काष्ठवत् सीधा रहता। कुल शरीर में ऐसे जोड़ १८० होते हैं। अंग्रेजी मतानुसार शरीर में हड्डियाँ इस प्रकार हैं—मेरुदंड में ३३, खोपरी में ८ चेहरे में १४, हृदय में २५ जिसमें पसलियाँ भी सम्मिलित हैं, दोनो हाथों में ६४, दोनो पावा में ६२ कान की और दाँत की हड्डियाँ मिला कर ३७ होती हैं।

स्नायु

सफेद सूत के सदृश सूक्ष्म तन्तु मस्तिष्क से निकल कर सारे शरीर में फैले हुये हैं और इन्हीं के द्वारा स्पर्श रूप रस गंध का ज्ञान होता है। वैद्यक में इनकी सख्या ९०० रखी गई है और इनका मुख्य कार्य मांसतन्तु अवयवों को अवयवों से और अस्थियो को अस्थियों से जोड़ना है। इनमें इतनी कोमलता और लचक होती है कि बाहरी आघात का प्रभाव अस्थितक नहीं पहुँचने पाता।

जो एक हृदय से फैफड़े में साफ होने को आता है उसमें प्रति सैकड़ा दसवा भाग आक्सिजन और छयालीसवाँ भाग कारबोनिक एसिडगेस होती है। जो एक फैफड़े से साफ होकर हृदय में वापिस आता है उसमें बीस भाग आक्सिजन और उनता लीस भाग कारबोनिक होताहै। यह अधिकांश आक्सिजन हृदय

सेसब अगों में अग्नि पैदा करता है और कुछ भाग उसका फिर फैफड़ों में कारबोनिक एसेडगेस अल बन कर लौट आता है। यकृति में जाने वाले रक्त में शरीरोप योगी कितनी ही चीज़ें होती हैं। किन्तु स्वेत रस में केवल चर्बी और रजकण ही होते हैं। रस आर्तो से निकल कर मास पेशीयो में घूमता हुआ हृदय के अशुद्ध कच्चे रक्त में सम्मिलित हो जाता है और ज्यों ज्यों रस हृदय तक आता है त्यों त्यों अपने स्वेत रग को परिवर्तन कर रक्त भाव धारण कर लेता है। रक्त शुद्ध करने का सर्व श्रेष्ठ उपाय केवल प्राणायाम ही है। जब हम तुरन्त प्रवाहित रक्त को अवलो कन करें तो उस समय लाल चिपचिपा पदार्थ प्रतीत होता है किन्तु यदि हम उसी सूक्ष्म यन्त्र द्वारा अवलोकन करे तो उसके छोटे छोटे लाल स्वेत कण दीख पड़ते हैं। लाल कणो का आकार गोल चपटा होता है। और जो अनुमान से एक वर्ग इञ्च के स्थान में एक करोड़ समा सकते हैं। स्वेत कण लाल कणों से अधिक बड़े होते हैं और न इनका कोई विशेष स्वरूप ही है और यह एक वर्ग इञ्च स्थान में २५० तक आ सकते हैं। स्वेत कणों में प्रति शताश ६० अश पानी होता है जो विषैले कीटों के मारने और घाव भरने के हितार्थ उपयोगी होता है। लाल कण वाला मनुष्य बलवान और स्वेत कणवाला निर्बल होता है। रक्त पानी से भारी होता है और स्वास्थ्यहित मनुष्य शरीर में १३ भाग रक्त होना उचित है।

धमनियां

यह वह नाड़ियाँ हैं कि जिनके द्वारा रक्त शरीर के सूक्ष्म से

सूक्ष्म स्थानों में भी पहुँचता है। इनका निकास नाभी से है और गिनती में २४ होती हैं। किसी प्रकार का अधिक आघात पहुँने पर जब यह कट जाती हैं तो इनसे फुव्वारे की भांति रक्त प्रवाहित हो उठता है कि जिसके कारण कभी कभी मनुष्य का प्राणान्त तक हो जाता है। जो धमनीयां अधिक सूक्ष्म और पतली हैं उनको शिरायें कहते हैं। जब रक्त शरीर में भ्रमण करने से अशुद्ध हो जाता है तब यही शिरायें उस अशुद्ध रक्त को यकृत तक लाती हैं। अस्तु इनको रक्त वाहिनी नालिया भी कहते हैं। यह गिनती में ७०० के होती हैं। शरीर में एक और भी कई प्रकार की रगें हैं जिसको अंग्रेजी में टेनड्न कहते हैं। इनके द्वारा मूत्र वीर्य आदि स्राव होता है और इनकी सख्या २२ होती है।

मस्तिष्क

कपाल के भीतर अखरोट की मींग की भांति एक वस्तु कोमल स्वेत स्निग्ध और धुनी हुई रुई की भांति होती है और यही ज्ञानागर होता है। युवक मनुष्य के मास्तिष्क का वजन अनु मान से १॥ सेर होता है। चने की दाल की भांति-प्रथम दो दो भाग परस्पर मिले रहते हैं और फिर एक भाग के दो भाग हो गये हैं यह सब मिलाकर ४ भाग हैं। जब इन भागों में कुछ खराबी पड़ जाती है तभी मनुष्य उन्मत्त हो जाता है जिसे पागल होना कहते हैं।

नेत्र

शरीर का यह मुख्य अग है। इसके बिना मनुष्य जीवन वृथा

है। नेत्र के तीन भाग हैं। प्रथम राटक नाम पर्दा श्वेत बर्थो बादाम के आकार का और कठोर सब से ऊपर होता है। उसके बीच में एक गोल द्वार उसके ऊपर एक पुलूयल चमकदार (कनजगटीवा) नामक झिल्ली और उस झिल्ली के भीतर एक स्वच्छ रंग रहित झिल्ली का गोल पर्दा नीला काला फेजई आदि रंग का होता है। इसके बीचोंबीच एक सूक्ष्म छिद्र होता है जिसे तिल कहते हैं। तीसरा पर्दा रिटीना नामक है। इसमें एक पीत बिन्दु अत्यन्त प्रकाशवान् होती है और यही नेत्र ज्योति है। यह प्राकृतिक नियम है कि नेत्रों के शीतल रखने तथा मलादि धोने के लिये नेत्र जल बिनूनीयों द्वारा निकल कर जमा होता रहता है और समय असमय नासिका द्वारा निकल आया करता है।

हृदय

हृदय छाती में दोनो फेफड़ों के बीच में स्थित है। इसका आकार नासपाती के समान प्रायः हथेली के बराबर होता है। वजन प्रायः पांच छटांक होता है। इसके बीच में एक खड़ी दिवाल है जिससे हृदय के दो भाग दायें बायें हो गये हैं और फिर दोनो भागों के चार भाग होते हैं। हृदय छाती के बांई तरफ तीसरी छटी पसली के दरम्यान छाती की हड्डी के बीच वाले हिस्से से लेकर निपल के एक इंच नीचे तक स्थित है। है। इसकी लम्बाई पांच इंच चौड़ाई साढ़े तीन इञ्च और मुटाई २½ इञ्च होती है। दिल का वजन मर्दों में पाव छः छटांक होता है मगर स्त्रियों का वजन इससे एक छटांक कम होता है।

अशुद्ध रक्त यहीं आकर शुद्ध होता है, अत इसका रंग काला होता है। अशुद्ध काला रक्त हृदय के दक्षिण भाग में आकर एकत्र होता है और जब हृदय सिकुड़ता है तो रुधिर एक नली द्वारा चला जाता है जो दोनों फैफड़ों में जाती है और महीन महीन शाखा प्रशाखाओं में विभक्त हो जाती है। हृदय का दाहना भाग काला और बायाँ सुर्ख होता है क्योंकि समस्त शरीर का अशुद्ध रक्त दाहने भाग में ही आ एकत्र होता रहता है और फिर धीरे धीरे बायें भाग में आ शुद्ध हो रक्त वाहिनी नसों द्वारा सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करता हृदय का ऊपरी भाग मोटा और नीचे का भाग पतला होता है।

फैफड़े

यह छाती में पसलियो के नीचे दोनों ओर दो पर्तों के सदृश स्थित हैं। इनका आकार मधु मक्षिका के छत्ते या स्पंज की भाँति है। रंग हलका बादामी और इसके कुछ नीचे ही हृद् यन्त्र है जो रक्त शोधन यन्त्र है और इसी से छाती में धड़कन शब्द उत्पन्न होता है। इसमें आकृति में झिल्ली के शतशः कोष्ठ छिद्र हैं। यहाँ आकर रुधिर अपनी अशुद्धता त्याग पुन: पूर्ववत् साफ और शुद्ध हो जाता है। मनुष्य साधरणतया एक मिनट में लग भग १५ बार श्वास लेता है, और एक बार के श्वास में नाड़ी ४-५ बार चलती है। युवा मनुष्य की अपेक्षा छोटा बालक और जागृति दशा की अपेक्षा सोने की दशा में श्वास अधिक लिया जाता है। यह पसलियों से अलग एक प्रकार की झिल्ली से लिपटे हुये हैं। स्वस्थ और जवान मनुष्य के फैफड़े

का वजन ११-१२ छटाक होता है मगर दायें का और बायें का ९-१० छटाक होता है। फेफड़ों पर सूजन या किसी बीमारी के होने से या गर्भावस्था में फैफड़ों का वजन बहुत कम हो जाता है। जिस प्रकार आमाशय का कार्य हमारे समस्त शरीर में आहारांश पहुँचाना है एव फुफ्फुस (फैफड़े) ही वायु पहुँचाने का कार्य करते हैं।

अतड़ियाँ

आतें रबर की नली के समान तीन झिल्लियों से निर्मित हैं। भीतर से पीली रस्सी के समान लिपटी, संकुचित और तै की हुई उदर के भीतर ढकी रहती हैं उदर चीरते ही बाहर निकल पड़ती हैं और प्राणान्त हो जाता है। भोजन प्रथम आमाशय में पच कर आंतो में आता है। यहाँ तीन प्रकार के रस मिलते हैं। एक रस अतड़ियो से, दूसरा यकृत से और तीसरा रस थूक से आकर मिलता है। आंते २५ फिट लम्बी हैं जिन में बड़ी आंत ५ फिट और छोटी २० फिट लम्बी होती हैं। नाभि के सम्मुख छोटी आंत एक बारीक झिल्ली से ढकी हुई मेरुदण्ड से लगी हुई है। भागते समय या परिश्रम करते समय जब आंते श्वास से यदि पूर्ण हों तो उस समय एकदम शीतल जल पीलेने से रोग होने की सम्भावना है। आंतो का डायमेटर अनुमान से १ इञ्च होता है। भोजन आमाशय में परिपक्व हो जाने के पश्चात् उसमें से श्वेत रस प्रवाहित होने लगता है और वृथा मल धीरे धीरे लघु आंतों में आ जमा होता रहता है। छोटी आंतो के ऊपर बड़ी आंते रहती हैं। छोटी आंतों के बीच

में से एक बड़ी रग हृदय तक पहुँची है कि जिसके द्वारा अशुद्ध रक्त और रस हृदय तक पहुँच शुद्ध रक्त बनते हैं।

गुरदे

शरीर में होते हैं। जो कमर की हड्डी के दोनों तरफ चूल्हे की हड्डी से ढाई इञ्च ऊँचे और जिगर और तिल्ली से इनका ऊपर वाला हिस्सा ढका रहता है। इनमें खून से पेशाब बनता है। जितना रक्त में मामूली से ज्यादा पानी का हिस्सा होता है वह सब गुरदे की बारीक बारीक नसों में छन छन कर मूत्राशय में जमा होता रहता है। एक गुरदे का वजन ढाई छटाक से तीन छटाक तक होता है। लम्बाई चार इञ्च चौड़ाई ढाई इञ्च और मोटाई डेढ़ इञ्च होती है। इनको अंग्रेजी में किडनी और फारसी में कलिया कहते हैं। इसका आकार सेम के बीज के समान होता है। इनके मध्य में दो नालियाँ हैं जो बस्ती को जाती हैं। यह रुधिर से पानी का भाग पृथक कर नलियो द्वारा बस्ती में डालते हैं।

यकृत

यकृत के दुर्बल होने पर पित्त नामक रस पीले रंग का उत्पन्न होता है जो अधिक मात्रा से उत्पन्न होने पर रुधिर के साथ मिल नाना प्रकार के दोष उत्पन्न कर देता है। यह पित्त यकृत के पास एक थैली में एकत्र होता रहता है और एक नली यहीं से चल कर अन्त्रियों के सिर पर मिली है। जब आहार रस छोटी आंतों में आता है तब यही पित्त रिस रिस कर उसमें

मिल पाचन शक्ति को तीव्र करता है। यह पित्त रात दिन में अनुमान से पच्चीस तीस छटांक के करीब उत्पन्न होता है। अन्दर से यह ठोस, रक्त से परिपूर्ण होता है। रंग भूरा कुछ सुर्ख लिये होता है। इसका अगला भाग मोटा और पिछला पतला होता है। जिगर का दायाँ भाग बड़ा और बायाँ छोटा होता है। बाजरे के समान असंख्य सूक्ष्म माँस कणों से मिल कर यकृत बना है। यकृत से सम्बन्ध रखने वाली पाँच नलियाँ होती हैं। आमाशय अतड़ी से रक्त लाने वाली नसें मिल कर एक मोटी शिरा बन जाती है। यह शिरा कलेजा में प्रविष्ट हो और फैल कर केशवाहिनी बन जाती है आमाशय से दाहिनी ओर ऊपर की तरफ छटी सातवीं पसली के सामने यकृत स्थित होता है। सीधे बैठने या खड़े होने पर इसका कुछ भाग पसलियों के नीचे आ जाता है। यह शरीर के अन्य भागों से अधिक भारी होता है।

तिल्ली

तिल्ली का वजन ढाई छटाँक से साढ़े तीन छटाँक तक होता है परन्तु भोजन पचने के समय या ज्वर दशा में उसका वजन कुछ अधिक हो जाता है। लम्बाई पाँच इंच, चौड़ाई तीन इंच और मुटाई डेढ़ इंच होती है। तिल्ली शरीर का बहुत ही उपयोगी अवयव है। जो पेट में बाँई तरफ आमाशय से अधिकाँश दबा हुआ है और कुछ बाहर की तरफ भी निकला हुआ है। इसका स्थान नवीं दसवीं और ग्यारहवीं पसली के सामने है। इसका परिमाण सब पुरुषों के समान नहीं होता है। बहुत के

समान यहाँ भी रंजक पित्त रहता है। डाक्टरों का कथन है कि खून की टिकिया इसी अंग मे बनती है। जब शरीर मे गरमी अधिक होती है कि जिसके प्रभाव से रक्त भ्रमण सवेग होने लगता है तो यह अङ्ग बहुत सा रक्त अपनी तरफ आकर्षित कर लेता है।



भूख प्यास और पाचन क्रिया

The water that we drink is absorbed into the blood vessels all along the alimentary canal beginning with the stomach

—*Dr R A Lyster*



ली पेट में जब रक्त अधिकता से एकत्र होने लगता और पेट की गिलटियाँ फूलने लगती हैं तब शरीर के स्नायुयों में एक प्रकार विकलता उत्पन्न होने लगती है उसी का नाम भूख है। इसी प्रकार शारीरिक परिश्रम करने से जो गर्मी उत्पन्न होती है और उससे शरीर का जल तप्त हो जाता है और हृदय में विकलता और दाह उत्पन्न होती है उसी का नाम पिपासा है।

भोजन करते समय जो कौर मुख में डाला जाता है उसमें उसी समय थूक मिलता है जो मुख की गिलटियों से उत्पन्न होता है और जो पाचन शक्ति प्रज्वलित करता है। तत्पश्चात् भोजन कण्ठ में होकर अन्नग्राहकनली द्वारा पाकस्थली में पहुँच जाता है। यहाँ पर पेट की गिलठियों से बना हुआ पाचन रस सम्मिलित हो इसे लोहू के माफिक कर देता है जिसे हम भोज्य रस के नाम से पुकारने लगते हैं। चार पाँच घण्टे में पेट के बार बार फूलने

और सिकुड़ने के कारण इसका भी रसस्राव द्वारा अग्रमूल भाग में आता है जहाँ पित्तरस और क्लोमरस सम्मिलित हो इस रस को स्वेत दूध सम कर डालते हैं जिसे पक्वरस कहते हैं। तत्पश्चात इसे २३ फीट लम्बी आंतों की यात्रा करनी पड़ती है। भ्रमण करते समय इसका एक और भी रस खिंचता रहता है। जो बड़ी आँतों में जमा होता रहता है और फोक या अपच पदार्थ गुदा द्वारा बाहर निकलता रहता है।

पानी पिया जाता है वह आमाशय में जाकर कुछ समायन्तर रुधिर में सम्मिलित हो सम्पूर्ण शरीर में मुख्य मुख्य नालियों द्वारा व्याप्त हो जाता है। इसलिये इसकी सफाई जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। ईश्वर बड़ा न्यायकारी है उसने पूर्व ही प्राकृतिक नियमानुसार हमारे शरीर भाग इस प्रकार बनाये हैं कि हमारे विना परिश्रम किये ही स्वय सफाई होती रहती है। गुरदे का भीतरी किनारा नतोदर और बाहरी किनारा उन्नतोदर होता है। भीतरी नतोदर भाग के पास एक गढ़ा या छेद होता है जिसमें होकर आदि कंडरा से रक्त लाने वाली एक धमनी वतधुरिग को रक्त ले जाने वाली एक शिरा गुजरी है। इसी स्थान पर मूत्र नली है जो पक्वत के भीतर फैली हुई बोतल के भाँति होती है। मूत्र नली प्राय एक फुट लम्बी चल कर मूत्राशय में प्रवेश करती है। गुरदा छोटे छोटे तन्तुओं से बना है कि जिनमें रक्त नलियाँ जाल की भाँति चहुँदिश फैली हुई हैं। यह तन्तु कौशिककला मसाले से बने हैं कि जिनके सूक्ष्म छिद्रों द्वारा रक्त का दूषित द्रव्य मूत्र भाग टपक टपक कर भर आता है। मूत्र में नत्रजन,

कार्बन आक्सिजन, नमक, सोडा, पोटास व यूरिया होता है। यह भाग विष होता है जो मूत्र नलीद्वारा स्वय ही निकल जाता है।

ईश्वर ने क्या ही अच्छे प्राकृतिक नियम रखे हैं कि शरद् ऋतु में हमारी भूख बढ़ जाती है और गर्मी में कम हो जाती है। यह कोई रोग नहीं वरन् स्वाभाविक प्राकृतिक नियम है। सारांश यह है कि शरद् ऋतु में हमारे शरीर की गर्मी कम हो जाती है जिस प्रकार चूल्हे को सर्दी या पानी के कारण अग्नि कम हो जाती है और फिर ईंधन की ज्यादा जरूरत होती है वैसे शरीराग्नि ठीक रखने के लिये भोजन की अधिक आवश्यकता पड़ती है।

प्यास से हमें इस बात की सूचना मिलती है कि रुधिर गाढ़ा और दूषित हो गया है या उसमें खटाई पदार्थ अधिक मात्रा में मिल गया है इसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जो मनुष्य नमकीन और मसाले वगैरह का अधिक प्रयोग करता है तो उसे प्यास अधिक सताती है। रुधिर को शुद्ध पतला और हृदग्नि को शान्त करने के लिये उस बार बार पानी पीने की आवश्यकता पड़ती है यदि रसीले फल जैसे अंगूर सेब नारङ्गी वगैरह अधिक खाये जायें तो प्यास कम लगती है क्योंकि फलों में पानी का अंश अधिक होता है। हमारे शरीर में तीन भाग पानी होता है और गुदात्वचा फैफड़ों आदि द्वारा १७ से २५ छटांक तक पानी शरीर से निकला करता है। अस्तु मनुष्य को उचित है कि दिन रात में इससे अधिक पानी अवश्य पिया करें ताकि पाचनशक्ति मन्द न पड़ जाय और रक्त भी शुद्ध होता रहे।

भोजन मुख में रख कर हमारा कर्त्तव्य है कि पेट में आने के पूर्व ही उसे भली भाँति रोथें मुख का कार्य आमाशय को न करना पड़े। माँस पेट के रसों से हजम होता है, और भोजन कि जिसमें चीनी और मैदा की मात्रा अधिक होती है मुख राल से ही हजम हो सकते हैं। अतः सिद्ध होता है कि भोजन को मुख में उतना अधिक रोथें कि जो इतना पतला हो जाय कि मुख में से पेट में स्वय उतर जाय और हमें मालूम भी न हो ऐसा करने से प्रथम तो भोजन शीघ्र पच जाता है और कुपचि आदि रोग उत्पन्न नहीं होते, दूसरे फिजूल मल भी अधिक उत्पन्न न हो अतड़ियों में न सड़ने पावेगा और न कोई रोग ही उत्पन्न होने पावेगा। इसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि बैल गाय वगैरह जुगाली करते हैं, अस्तु उनका मल न तो सड़ता ही है और न वह रोगों से आक्रान्त ही होने पाते हैं।

भोजन जब भली भाँति पतला होकर निगला जाता है तो वह आमाशय में प्रविष्ट हो जाता है और वहाँ जठराग्नि नामक, आमाशय की अग्नि इसे पकाती है। बहुत से मनुष्य यह कहा करते हैं कि भोजन करते वक्त पानी पीना उचित नहीं परन्तु उनका विचार हमारी समझ में ठीक नहीं क्योंकि प्रथम तो पानी पीने की अधिकता और अल्पता मनुष्य की जठराग्नि पर निर्भर है क्योंकि जिसकी अग्नि अधिक है उसे पानी की अधिक ज़रूरत पड़ती है, और जिसकी अग्नि मन्द है उसे कम पानी की जरूरत होती है। पानी न पीने से भी पाचनशक्ति मन्द पड़ जाती है और अधिक पीने से भी। अस्तु अन्त में यही सिद्ध होता है कि

पानी न तो अधिक ही और न कम ही पिया जाय वरन् आवश्य कतानुसार भोजन के अन्त और आरम्भ में न पीकर बीच में ही पिया जाय।

विद्वानों का अनुमान है कि भोजन तीन घन्टे से पाँच घन्टे के अन्दर अन्दर ही पच जाता है। इसमें लेश मात्र सन्देह नहीं कि जिस मनुष्य का आमाशय साफ है तो वह पूर्ण आरोग्य है। आमाशय की सर्वोत्तम परीक्षा केवल पाखाना ही है। जब पाखाना आपको नित्य समय पर बिना किसी विकलता के और कमती बढ़ती न होता हो तो समझ लेना चाहिये कि हम आरोग्य हैं। इसकेअतिरिक्त दस्त न ज्यादे लेकसदार पतला और चिक नाहट लिये हो और न अधिक सूखा और सख्त ही हो वरन् बीच की दशा में होना चाहिये। सारांश यह है कि यदि हमारे आमा शय में आकस्मिक रोगों के अतिरिक्त यदि कुपथ आदि का दोष नहीं है तो नि सन्देह हम आरोग्य हैं। आमाशय को सुरक्षित रखने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि सादा आहार उचित समय के पश्चात् करना और भूख लगने पर भी आमाशय को खाली न रखना क्योंकि आमाशय के खाली रहने पर यदि उसे खुराक न मिली तो वह रक्त पान करने लगेगा। इस बात को दृष्टि में रखते हुये कि शरीर केप्रत्येक अवयवों को परिश्रम के उपरान्त विश्राम की अधिक आवश्यकता है, तो फिर यह दशा आमाशय की भी समझनी चाहिये। यदि यह भोजन से खाली रहेगा तो उसको विश्राम भी मिलेगा और पाचक अर्क भी प्रचुरता से पैदा कर सकेगा जो पाचन क्रिया का अपूर्व मुख्य सहायक है। प्रथम

भोजन जब पूर्ण रूप से न पच सके तो इसके पूर्व नया भोजन खालेना मानो पाचन शक्ति को निर्बल और शक्तिहीन करना है। जब तुम्हें भोजन से अरुचि रहे अथवा तुम्हारी जीभ पर एक प्रकार की स्वेत रंग की पपड़ी जम जाय तो यह जान लो कि हमारा आमाशय खाली नहीं है औरभोजन करने से लाभ के स्थान उलटी हानि होगी।

अपाचन शब्द का मुख्य अर्थ केवल यह है कि भोजन के पचन हो जाने पर जब कुछ मादा अंतड़ियों में अटका रह जाने के कारण एक प्रकार का विष उत्पन्न होने लगता है कि जिसे आंते निकालने के लिये उद्योग करती हैं। कब्ज को दूर करने के सर्वोत्तम निम्नांकित उपाय ही हैं :—

(१) व्यायाम करना।

(२) पेट को मलना व गूंधना परन्तु स्मरण रहे कि हाथ दायें पहलू से ऊपर की ओर लाओ और वहाँ से नाभी के नीचे से बायें तरफ लेकर नीचे की तरफ ले जाओ क्योंकि इस प्रकार करने से बड़ी आंत की मालिश हो जाने से मल स्वयं नीचे गिरने लगता है।

(३) जमीन पर सीधे लेट जाओ और नम्बर बार पैरों को ऊपर की तरफ धीरे धीरे उठाओ।

———

मालिश करना

जलसिक्तस्य वर्धन्ते यथामूलेऽङ्कुरास्तरोः ।
तथा धातुविवृद्धिर्हि स्नेहसिक्तस्य जायते ॥

—सुश्रुत

अर्थात्—जैसे वृक्ष की जड़ में जल सींचने से उसके शाखा के अंकुर बढ़ते हैं एवं तैल मर्दन से मनुष्य शरीर की धातु ती है।



बुकरात का कथन है कि मालिश करने से शारीरिक शक्ति व अवयवों में परिवर्तन हो जाता है अर्थात् बल बलाते हुये अगगठित गठित, ढीले मोटे-पतले और पतले मोटे हो सकते हैं धीरे धीरे मालिश करने से शारीरिक अंग ढीले होते हैं और ज़ोर के साथ मलने से सगठित हो जाते हैं। सर्वदा मालिश ऊपर की तरफ अर्थात् दिल की तरफ करनी उचित है। जैसे मस्तक से हृदय की तरफ पावों से जांघो की तरफ और हाथों की कंधे की तरफ। मालिश करने से हमारा केवल यही अभिप्राय होता है कि रक्त में उष्णता उत्पन्न हो वह सवेग भ्रमण करने लगे। अधिक समय तक चलने फिरने वा शारीरिक परिश्रम करने से पैरों में फूटन व एक प्रकार का दर्द होने लगता है। ऐसे रोगी को पैरों के तलवे व पिंडलियों

पर धीरे मालिश करनी चाहिये। नींद न आवे व मस्तक व नेत्रों में व्याकुलता या अग्नि सी प्रतीत हो तो सिर व मस्तक पर मालिश करने से तुरन्त एक प्रकार की शान्ति अनुभव होने के अतिरिक्त सच्ची निद्रा आने लगती है। एक विद्वान् का कथन है कि महीने में एक बार तो अवश्य ही कान में भी तेल डालना आरोगप्रद होता है। कान में तेल डालने से ठोड़ी गर्दन की मन्या नामक शिरा मस्तक और कान के दर्द का नाश होता है। क्षौर के पश्चात् भी बाल कटने के स्थान पर तेल लगाना अवश्य चाहिये।

मालिश करने पर निम्नाँकित बातों को भली भाति विचार कर निर्णय कर लेः—

(१) ज्वर के समय और शरीर फोड़ा फुन्सी होने के समय मालिश करना उचित नहीं।

(२) मालिश चार प्रकार की होती है। प्रथम ऐफलयूरेज अर्थात् नर्मगर्म टकोर टकोर हाथ की दो उगलियों से दी जाती है। पहले धीरे और फिर इतना दबाव दिया जाता है कि शरीर के भीतरी अगों तक उसका प्रभाव पहुँच सकता है। दूसरी पेट्रीसेज अर्थात् चमड़े गूंधना और लपेटना। शरीर के पट्ठों तथा बनावट को गूंधना और उसके चारों तरफ समयानुसार हाथ जरा सख्ती के साथ शीघ्रता पूर्वक बारम्बार फेरना पड़ता है परन्तु न तो इतना ही सवेग हो कि जिसके जलन उत्पन्न होने लगे और न इतनी जोर के साथ हो कि जिससे तकलीफ मालुम होने लगे। तीसरी टैपो टेमन् अर्थात् थपकना।

इससे धीरे धीरे हथेली से थपकना पड़ता है। यह क्रिया पेट पर न करनी चाहिये। चौथी वाईब्रेशन अर्थात् अंगुली और हथेली से दबाना।

(३) कान्तिवर्धक मालिश—यदि मनुष्य सवेरे उठकर गर्म पानी की भाप से इतने समय तक मुख को सेके कि भली भाँति पसीने आजायें। तत् पश्चात् किसी स्वच्छ खरदरे वस्त्र से पसीनों को खूब रगड़ कर पोंछ डाले और किसी खिड़की के पास बैठ कर कि जहां से स्वच्छ सुगन्धित पवन आती हो तैल की मुख पर मालिश करे कि हाथ ठोडी की तरफ जाय। कुछ समय तक ऐसा करने से आप को ज्ञात हो जायगा कि आप के यह कान्ति हीन मुख सूखेगाल पुन मोटे और तेजस्वी प्रतीत होने लगेंगे।

(४) अजीर्ण निवारक मालिश—प्रथम एक बार पाचक अंगों की शक्ल और मुख्य कर कोलन नामक बड़ी आन्त के तीनो भागों का स्मरण रखना चाहिये क्योंकि फुजला इसी भाग में इकट्ठा होता है। रोगीचित्त लेट जाना चाहिये और टांगो को फैला कर अलग रखना चाहिये। दाये और नलों के पास जहाँ से छोटी आतें खतम हो कर बड़ी आत आरम्भ होती है। बस यहीं सेहाथ से दबाते हुये उपर की तरफ आना चाहिये। अभ्यासी का हाथ भी दूसरी के पास से बाँई ओर जाना चाहिये जहाँ से कि बड़ी आत नीचे गुदातक पहुँचती है। हाथों का दबाव नलो तक पहुँचना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से फुजला आगे की तरफ खिसकने लगेगा।

जिन के गाल पतले हो अथवा गालों की हड्डी उपर को उभरी

हुई हो और मुख पर एक प्रकार का रूखापन तथा सफेद दाग हों तो ऐसे मनुष्य को उचित है कि वह बादाम के तेल की मालिस धीरे धीरे ठोडी की तरफ से ऊपर को किया करे ऐसा करने से गाल भारी और मुख पर एक प्रकार की दमदमाहट दृष्टिगोचर होने लगती है।



सुन्दरता भी स्वास्थ्य का अंग है

Beauty comprises colour, form balance and symmetry all of which make health and are made up by health.

C. W. V.



य पाठक गण! यह कथन कितनी ही दशाओं में कदापि अनुचित न होगा कि संसार में ऐसे भी मनुष्य हैं कि जो सर्व भांति हृष्ट पुष्ट और आरोग्य दृष्टिगोचर होने पर भी यदि अभाग्यवश उनके किसी एक भी शारीरिक अवयव में न्यूनता या अधिकता आगई तो उसकी समस्त सुन्दरता कपूरवत् उड़जायगी और यदि वह पूर्ण सुन्दर है परन्तु स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण वह सदैव रोगी रहता है तो भी उसकी वह सुन्दरता फीकी ही प्रतीत होती है। उक्त लिखित शब्दों से यही अभिप्राय निकलता है कि स्वास्थ्य और सुन्दरता का घनिष्ट सम्बन्ध है अथवा यों कहिये कि स्वास्थ्य बिना सुन्दरता और सुन्दरता बिना स्वास्थ्य एक प्रकार से फीके और नीरस ज्ञात होते हैं। दोनों में स्वास्थ्य का दर्जा अच्छा है और स्वास्थ्य ही सुन्दरता की नींव है। श्रीमती एमीजाम्स मिलर का कथन है कि रोग

कुरूपता व स्वास्थ्य सुन्दरता के चिन्ह हैं परन्तु यह दोनों हमारे रहन सहन आहार विहार पर निर्भर हैं। स्वास्थ्य आकस्मिक आगन्तुक रोगों व घटनाओं के आक्रमणों से रक्षा करता है परन्तु सुन्दरता दूसरे के स्वभाव व हृदय पर प्रभुत्व स्थापित करने में सहायता प्रदान करती है। सौन्दर्य्य का हमारे जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। स्वभाव और कार्य का हाल तो बाद को ज्ञात होता है परन्तु दो जीवों के परस्पर मिलते ही रूप व लावण्यता के ही कारण परस्पर आकर्षण प्रेम उत्पन्न होने लगता है।

यदि कोई अपने सौन्दर्य्य प्रभाव से दूसरे के हृदय को वशी भूत न कर सके तो गुण का दोष नहीं वरन् उसकी मानसिक शक्ति और आत्मिक बल की न्यूनता का ही अभाव है। जिस प्रकार मानसिक शक्ति सौन्दर्य्य की सहायक है एव हृदय का भी प्रभाव सुन्दरता पर इससे भी अधिक पड़ता है। उदाहरण अनुमान करलो कि यदि किसी का हृदय साँसारिक वेदनाओं से व्यथित है अथवा चिन्ताओं और पश्चातापों से क्षुब्ध है तो क्या उसकी मुखाकृतिहास्यपूर्ण हो सकती है या उसके मलीन मुखपर लावण्यता प्रतीत हो सकती है? चाहे किसी का मुख कितना ही सुन्दर क्यों न हो किन्तु उसके हृदय में दूषित विचार अंकित हैं तो उसका मुख कदापि मनमोहक नहीं हो सकता है और यदि उसके विचार शान्ति पूर्ण होने के अतिरिक्त उसके हृदय में सत् प्रेम का स्रोतप्रवाहित है तो उसके मुखमण्डल पर अपूर्व तेज दर्शित होगा। जिन मनुष्यों के मुख पर चिन्ता पूर्ण

उदासीमता टपका करती है ऐसे जन सुन्दर कहाने का कदापि दावा नहीं रख सकते। सुन्दरता के इच्छुक को उचित है कि वह शोक और उदासीनता के स्थान में प्रेम और शाही स्वभाव और दूषित विचार और कुचरित्र के स्थान में सच्चरित्रता उदारता और क्रोध के बजाय सप्रेम वार्तालाप करने को अपने हृदय में स्थान दे।

जब हम पूर्व और आधुनिक काल व दशा की तुलना करते हैं तथा ग्राम निवासी और शहर वासी की परस्पर स्वास्थ्य और सुन्दरता की समता करते हैं तो यह प्रश्न उपस्थित होता है कि अमीर वैभवशाली मनुष्यों से ग्राम निवासी गरीब दरिद्रों की शारीरिक स्थिति क्यों उन्नति पर है। ऐसा क्या कारण और कौन सा उपाय है कि जिसके द्वारा उनका स्वास्थ्य और सौन्दर्य अधिक समय तक स्थित रहता है। इसके उत्तर में केवल इतना ही कथन पर्याप्त होगा कि उनके आहार-विहार, रहन सहन आदि प्राकृतिक नियमानुसार हैं और दूसरे वृथा विषय भोगों में लिप्त न रहने के अतिरिक्त उनके हृदय में सर्वदा कुत्सित विचारों का सा राज्यस्थापित रहता है। वह अपनी चटक भड़क तथा टीप टाप के लिये अप्राकृतिक नियमों का उपयोग नहीं करते। हम दोषी की भांति बन्द और गन्दे मकानों में कैद रहते हैं और वह सायंकाल प्रातःकाल की अमृत तुल्य पवन का निशिदिन सेवन करते हैं। प्रथम तो वह चटपटे अधिक मसालेदार व गरिष्ठ भोजनों का उदराशय करना जानते ही नहीं हैं और यदि किसी कारण उनके शरीर में दूषितरक्त या मल उत्पन्न हो भी गया

या होता है वह सब शरीरके परिश्रम करने से पसीने द्वारा निकल जाता है दूसरे प्राणायाम द्वारा शुद्ध होता है परन्तु हम निशिदिन चट पटे अधिक मसाले दार हृदय को दाह उत्पन्न करने वालेभोजन के खाने में ही आनन्द अनुभव करते हैं तिस पर भी यह कि परिश्रम के नाम कोसों दूर भागते हैं। हम चट पटे और गरिष्ट भोजन करते हैं और वह सादा हलका और फल तरकारी पर जो स्वाथ्य, और रक्त को अधिक लाभ प्रद है जीवन व्यतीत करते हैं उक्त लिखित बातों सेस्पष्ट ज्ञात होता है कि उन में हम में कितना भारी अन्तर है। तो फिर क्या सन्देह कि वह हमसे स्वास्थ्य और सुन्दर अधिक क्यों नहीं। हम अब कुछ सौन्दर्यवर्धक उपाय लिखते हैं।

सुन्दरता के उपासकों को उचित कि है वह सब से प्रथम नमक मिर्च आदि गरम मसाले हृदय को दाह पहुँचाने वाले तथा रक्त दूषित करने वालों को त्याग सादा सात्विक आहार अथवा फलोंपर जीवन निर्वाह करें।

जिसको अपनी मुखाकृति सुन्दर बनाने की आवश्यकता है सो उसे उचित है कि वह क्रोध दाह ईर्ष्या आदि दुगणों से विरक्त हो शान्तिचित्त रहे प्रफुल्ल मुखाकृति रखे और धूप में अधिक समय तक न बैठे।



निर्बलता

•⁂•

हैं आप बच्चे बाप जिनके पुष्ट होवें क्या भला ?
आश्चर्य है अब भी हमारा वंश आता है चला ॥
सन्तान कैसी है हमारी सो इसी से जानलो।
मुख देख कर बुद्धिसे मन को स्वयं ही पहचानलो ॥

भारत भारती



यदि आप प्रातःकाल से सन्ध्यासमय पर्यन्त मिलने जुलने वालों से उनकी स्वास्थ्य-दशा के विषय प्रश्न करेंगे तो आप को पूर्ण रूप से ज्ञात हो जायगा कि कठिनता से प्रतिशत आप को ५ ऐसे मिलेंगे जो अपने को पूर्ण रूप से शक्तिशाली कहने का साहस रख सकते हों। बाकी ९५ किसी न किसी स्वरूप में अपने को निर्बलता के चंगुल में फसे हुये बतलायेंगे। अब हम पूर्व पूर्वजों की दशा की और आधुनिक काल की परस्पर तुलना करते हैं तो यह कहे बिना कदापि नहीं रहा जाता कि हमारे भाइयों की शारीरिक स्थिति सशक्त होने के बदले निशदिन निर्बल और जीर्ण शीर्ण होती चली आती है। जब हमें अपने पूर्वज अर्जुन भीष्म आदि श्री वीरवरों के वीरत्व

की कथायें स्मरण हो आती हैं तब हमें उस समय एक प्रकार की लज्जा प्रतीत हो यही लालसा उत्पन्न होती है कि हम भी इन्हीं के समान शक्ति सम्पन्न हो जायें तो अति उत्तम हो परन्तु आत्मिक उत्साह की न्यूनता और दुर्भाग्य वश हमारे इस प्रकार के सुविचार अधिक समय तक स्थिर न रह वर्षा ऋतु के पानी के बुलबुलों के समान शीघ्र ही हृदयस्थ हो जाते हैं पाठकों से सप्रेम प्रार्थना है कि आप संसार में कुछ कर दिखाना चाहते हैं अथवा अपने पूर्वजों की विमलपताका को संसार में फहराना है तो जो सब से प्रथम आप निर्बलतारूपी भयंकर दुःखदाई शत्रु को शरीर से निकाल दूर भगाने का निरंतर उद्योग करो।

वृथा मिथ्या कल्पना कर स्वयं रोगी होना है इसमें सन्देह नहीं कि यदि मनुष्य शान्ति चित्त हो प्राकृतिक नियमानुसार रोग की वास्तविक दशा पर विचार करे तो उसको ज्ञात हो जायगा कि रोग उत्पन्न करने तथा निर्बलता की वृद्धि में प्रबल सहायक केवल मनुष्य की भ्रामिक कल्पना ही है। मूर्ख मनुष्य रोग उत्पन्न होते ही या होने के पूर्व ही साहस हीन तथा कर्त्तव्य विहीन हो न जाने किस किस प्रकार की कल्पित कल्पनायें कर अपने हृदय को वृथा खेदित कर डालते हैं। यह विषय विचारणीय है कि जब मनुष्य का हृदय दुखित रह नाना प्रकार की चिन्तायें शरीर का रक्त पान करती रहें तो फिर क्यों कर वह शक्तिशाली और निरोग रह सकता है क्योंकि स्वास्थ्य की निर्भरता रक्त पर ही अवलंबित है। कोई कोई मनुष्य ऐसे भी होते हैं कि उनका शरीर प्राकृतिक रूप में दुबला पतला हो

अवश्य होता है परन्तु कोई शारीरिक वास्तविक अभ्यन्तर न्यूनता वा निर्बलता नहीं होती तथापि अज्ञानी मनुष्य वृथा सन्देह कर बैठते हैं कि मैं रोगी ही हूँ, शरीर में समस्त हड्डिया ही हड्डिया दिखाई देती हैं अथवा हम मोटे और डीलमे में हृष्ट पुष्ट नहीं हैं इत्यादि। इतना होते हुये भी इनमें कितने ही ऐसे भी होते हैं जो किसी सुशिक्षित तथा पूर्ण अभ्यासी वैद्य की शरण आ अपनी दुःख कथा नहीं कहते क्योंकि उनके तो कोई रोग नहीं होता है। वह विचारे जाकर कहें तो क्या कहें और क्या रोग बतावे इत्यादि। ऐसे रोगी अपनी वास्तविक प्रकृति पर कुछ विचार नहीं करते वरन् समाचार पत्रों में अवलोकन कर नाना प्रकार की दूषित विषेली औषधिया नेत्रमूंद उदरस्थ कर जाते हैं कि जिनका परिणाम उन्हें यह मिलता है कि उनको धीरे धीरे नाना प्रकार के रोग घेरने लगते हैं। मन चाहें जिस समाचार पत्र या किसी मासिकपत्रिका को आप अपने कर कमलों में ले अवलोकन करेंगे तो आप देखेंगे कि आधे से अधिक समाचार पत्र व पत्रिका हमारे वैद्य भाईयों के दूषित अश्लील विज्ञापनों से परिपूर्ण होगी। विचारा रोगी अपनी स्थिति को विचार न कर उनके मनमोहक विज्ञापनों को देख रोग मुक्ति होने की आकाक्षा से अपना रक्त सम कमाया द्रव्य पानी की भांति बहा दवाईया मँगा उपकार करते हैं परन्तु परिणाम विपरीत निकलता है अर्थात् "मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की"। हां कोई पेटेण्ट औषधि अपना प्रभाव अवश्य दिखाती तो हैं परन्तु वह भी कुछ समय के लिये और अन्त में

बारूद की भांति एक दम भक हो सदैव के लिये शान्ति हो जाती हैं।

अमीरों की अपेक्षा गरीब क्यो अधिक शक्ति शाली हैं? आज कल शहर निवासी नाना प्रकार दुःख भोगते हैं तथा समयानुसार मन इच्छित वस्तु प्राप्त हो सकने पर भी ग्राम निवासी बिचारे दीन दरिद्र सर्व प्रकार असहाय होने पर भी क्यो हृष्ट पुष्ट और शक्तिसपन्न होते हैं। दूसरे बिचारे गरीबों की कोई यथा इच्छा आकांक्षा पूर्ण ही नहीं होने पाती और न स्वास्थ्य प्रदायक नियमों के पालन करने का अवकाश ही मिलता है तथापि वह उन वैभव शाली पुरुषो से कहीं शक्ति सम्पन्न है कि जिन्हें बिना परिश्रम किये ही मनभावन भोग्य पदार्थ नाना प्रकार के मिल जाते है दिन भर में कई दवाईयां पी जाती हैं और जिनके चहुँ दिश डाक्टर वारों की भरमार रहती है। हमारे अनुमान से तो इसका यही मुख्य कारण प्रतीत होता है कि गरीब मनुष्य को अपनी उदर यात्रा पूर्ण करने के लिये नाना प्रकार के शारीरिक परिश्रम करने पड़ते हैं कि जिसके कारणउनके शरीर का दूषित रोग उत्पन्न करने वाला विष पसीने आदि रूप में शरीर से निकल जाता है। दूसरे कष्ट कर कार्य करने के कारण उन्हें सवेग और अति शीघ्र शीघ्र श्वास लेना पड़ता है जो प्राणायाम स्वरूप है और रक्त शुद्ध करने के अतिरिक्त छाती के सम्पूर्ण प्रकार के रोगों को निर्मूल करता है। अब दूसरी तरफ अमीरों की दशा पर ध्यान दीजियेगा। परिश्रम के नाम से कोसों दूर भागते हैं उन्हें जरा सर्दी लगने से जुखाम और गर्मी लगने

से बुखार का भय रहता है। साराश यह है कि शहर निवासी जैंटिलमैन नाना भाँति की कामोत्तेजक परिस्थितियों में लिप्त रहते हुये भी अनेक प्रकार की अप्राकृतिक भोज्य पदार्थों को उदरस्थ कर जाते हैं परन्तु ग्राम निवासी अपना जीवन प्राकृतिक नियमानुसार व्यतीत करने के अतिरिक्त उन वस्तुओं का व्यवहार नहीं करते कि जिसके कारण उनका जीवन दुःखमय हो जाय।

मैथुन भी निर्बलता का मुख्य कारण है। यह विषय बड़ा विचारणीय और गूढ़ है जितना अधिक विचारोगे उतना ही अधिक रहस्य मालूम होता जायगा। हाय यह वही पवित्र भारत भूमि है कि जहाँ सैकड़ो भीष्म समान वीरों ने आजीवन अविवाहित रह जीवन व्यतीत कर डाला मैथुन शब्द के वास्तविक अर्थ से परिचित ही न होने पाये परन्तु हाय हम उन्हीं वीरों की सन्तान होकर स्वशरीर में स्पष्ट रूप से वीर्य का प्रादुर्भाव न होने के पूर्व ही उसमें पतन रूपी कीड़ा हर्ष पूर्वक लगा लेते हैं कि जिसके कारण उचित समय आने के पूर्व ही कराल काल के कवल हो जाते हैं। अधिकांश मनुष्य यह कह बैठते हैं कि वीर्य का जितना उपयोग किया जाय उतना ही लाभप्रद है परन्तु यह उनकी भ्रमपूर्ण कोरी कल्पना है। हाँ यह अवश्य सत्य है कि यदि मैथुन पूर्ण अवस्था प्राप्त होने पर काल विधि और समयानुसार सयेग से विरक्त हो केवल सन्तान उत्पत्ति हितार्थ किया जाय तो तादृश हानि नहीं कि जितनी अप्राकृतिक नियमानुसार वृद्धा, रोगिणी अथवा पर-स्त्री के साथ करने से होती है।

अत्यन्त शोक के साथ लिखना पडता है कि अधिकाश आज समय नवशिक्षित नवयुवकों ने स्वेच्छानुसार कितनी ही नवीन प्रणाली स्त्री सभोग के अतिरिक्त प्रचलित कर रखी है जिसे हस्त मैथुन, मुष्टि मैथुन या मास्टरबेशन कहते सुना है। सच तो यह है कि जो भाई स्वयसिद्ध वीर्य पात प्रणाली में फँस चुके हैं तो उनका जीना, और मरण एक तुल्य है और उनकी दशा लज्जाजनक है। व्यभिचारिणी, लज्जाहीन स्त्री से वार्तालाप करने, दूषित अश्लील कामोत्तेजक उपन्यासों के पढ़ने, कुसगति में बैठने से और इन्द्रिय के ऊपर या पास दाद वगैरह हो जाने से भारत के होनहार भोले भाले शुद्ध विचार वाले बच्चे इन कुकृतियो के शिकार हो जाते हैं।

स्वस्त्री के साथ नियमानुसार दस दफा भी मैथुन करने से इतनी निर्बलता व्याप्त नहीं होती कि जितनी अप्राकृतिक रूप से या पर-स्त्री के साथ एक बार ही करने से होती है। इसका यही कारण है कि प्रथम तो पति-पत्नी की भावनायें प्रकृति एक होती हैं दूसरे भरपूर समय मिल जाने पर काम स्वय उत्तेजित होने पर सभोग किया जाता है परन्तु पर स्त्री के साथ या नवीन प्रणाली से प्रथम तो परस्पर मति विभिन्न होने तथा समय पूरा न मिलने के कारण इन्द्रियाँ शिथिल होने पर स्वयं इच्छा निकल कर वरबस कामो दीप्ति कर इच्छा पूर्ण करनी पडती है। अप्राकृतिक नियमानुसार वरबस शारीरिक अवयवों को उत्तेजना देनी पड़ती है जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। परमात्मा ने स्त्री की योनि में एक प्रकार की सरसता रखी है कि जो भोग

करते समय स्वयं इस अभिप्राय से प्रवाहित हो उठती है कि मदनांकुश व योनि दोनों को किसी प्रकार की कठोरता प्रतीत न होने पाये परन्तु हस्त मैथुन करने से हस्त की या उसकी जिस से किया जाय कठोरता से लिंग की नाड़ियों में निर्बलता हो रक्त के स्थान में पानी भरने लगता है और कुछ समय में ही इस कुक्रिया का व्यसनी नपुंसक हो अपने जीवन सुधा से वंचित हो बैठता है किसी ने ठीक लिखा है कि यह अभ्यास उपस्थेन्द्रिय का सब से भ्रष्ट दुरुपयोग है और अभ्यासी की उच्च आकांक्षाओं व भावनाओं को नष्ट भ्रष्ट कर देता है। तथा शरीर को अप्राकृतिक वीर्यपतन के कारण एक बड़ा गहरा धक्का लगता है।

माता पिता के निर्बल होने पर सन्तान का निर्बल होना असंभव नहीं। कई निर्बल और प्रमाचारी मनुष्य यह कह दोष मुक्त होने की आकांक्षा रखते हैं कि हमारे माता पिता निर्बल रोगी हैं तो फिर हम किस भांति शक्तिशाली और निरोग रह सकते हैं परन्तु उन का यह कथन कितनी ही दशा में अनुचित है क्योंकि कई जगह देखागया है कि दीर्घ जीव स्वस्थ मनुष्यों की सन्तान स्वल्पायुरोगी और रोगी और स्वल्पायु की सन्तान दीर्घ जीवी होते देखे गये हैं। इस में सन्देह नहीं कि पुत्र पुत्री माता पिता के शरीर व स्वभाव के एक मुख्य अंग हैं अस्तु उनके आचरण चाल चाल दुःख सुख निर्बलता सबलता का प्रभाव बिना पड़े तो कदापि नहीं रह सकता ऐसी दशा में माता पिता का कर्त्तव्य है कि वह अपने बच्चों के दर्पण तुल्य निर्मल हृदय में आरम्भ से ही उन बातों का पूर्णोच्छेद करावें कि जिन

के कारण उन को निर्बलता ने आघेरा है। उन दुर्व्यसनों तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सरल नियमों से भली भांति परिचित कर दें ताकि उन वीर वरो की वीर कथाओं से अपनी शारीरिक स्थिति सुधार की तरफ आकर्षित होने लगे और कुपथ पर पदार्पण करने से घृणा उत्पन्न हो जाय। माता पिता तथा प्रत्येक आत्मीय जनों का कर्त्तव्य है कि वह बच्चों के सन्मुख उन दूषित शब्दों का व्यवहार न करें यह समझ कर कि हमारा बालक निरा अज्ञान है उसे कुछ सांसारिक बातों का अनुभव नहीं अस्तु उसी के सन्मुख नाना प्रकार की कुक्रिया करने में क्या हानि है यद्यपि उनकी अद्भुत प्रशंसनीय क्रियाओं को शान्ति पूर्वक शयन स्थान पर पड़ा आनन्द पूर्वक अवलोकन किया करता है फिर कुछ ज्ञान उत्पन्न होने पर उसके भले बुरे अर्थ से अनभिज्ञ रहते हुये भी उन बातों की नकल उतारा करता है। प्रथम तो इन क्रियाओं का हृदय में बीज बोदी जाता है फिर दूसरे संगति इसी प्रकार की हो बीज का वृक्ष हो जाता है और फिर स्वय ही नाना प्रकार की शाखा प्रशाखा फूट निकलती हैं।

Weakness is a sin and there is no place for weakness in the world

रोग उत्पन्न होते ही अप्राकृतिक चिकित्सा करना अनुचित है—जिस प्रकार ज्वालामुखी पहाड़ स्वय ही उत्पन्न होता है और अधिक मात्रा में अग्नि उत्पन्न हो जाने पर फट पड़ता है एव शरीर में भी एक प्रकार का 'यूरिक एसिडनामक विष अनुमान से प्रति दिन यो ही उत्पन्न हुआ करताहै जो पसीने मल मूत्रादि

दूषित पदार्थों द्वारा निकलता रहता है। जब शरीर से इस विषका निकलना बन्द हो जाता है या कुछ अधिक मात्रा में एकत्र होजाने पर उसी स्थान में पीड़ा उत्पन्न होने लगती है परन्तु जब प्रकृति विष को निकालने का प्रयत्न करती है तो उस समय जो कष्ट अनुभव होता है उसी का नाम रोग है। यह अटल प्राकृतिक नियम है कि यदि शरीर में कोई रोग उत्पन्न होजाय तो उस समय उसे कुछ छेड़ छाड़ न कर स्वाभाविक स्थिति में ही रहने दें तो प्रथम तो प्रकृति ही उसे स्वयं शुद्ध होने का यत्न करेगी दूसरे हम उसे अप्राकृतिक औषधियों द्वारा उपचार न कर रोग के उत्पन्न होने के मुख्य कारण व स्थान को शुद्ध करें तो अति उत्तम हो और हम शीघ्र ही निरोग हो जायें। यथा पेट में बदहज्मी होने पर भूखा रहना उत्तम है न कि फ्रूटसाल्ट का व्यवहार करे ताकि हम स्वय शरीर क्रिया व प्राकृतिक उपचार में बाधा डाल ऐसे वस्तु का उपयोग कर बैठें कि जिसका प्रतिकार या प्रतिबध शरीर शक्ति सामर्थ से बाहर हो जाय। प्रथम तो शरीर ही स्वय अपने अवयवों की रक्षा आप कर लेता है जिस प्रकार आँखों के हैं। तीक्ष्ण औषधि उपचार से रोग दब तो गया परन्तु पुन कुछ समय पश्चात् नवीन रूपधारण कर शरीर के अन्य किसी भाग में पूर्व के भी अपेक्षा अधिक जोर शोर से उत्पन्न होने लगता है कि जिसका उपचार होना भी एक प्रकार से असम्भव हो जाता है। हमारे शरीर से जो रोग रूपी विष निकलता व शुद्ध होना आरम्भ होता है, उसे हम अप्राकृतिक नियमों

से रोक देते हैं सो अनुचित ही हैं। हमें उचित है कि हम अपने शरीरस्थ विषों को उनकी स्वेच्छानुसार शुद्ध होने दे और किसी प्रकार की कोई बाधा न डालें।



स्वर्ण उपदेश

१—सप्ताह में दो बार अवश्य शरीर पर तैल मालिश करना लाभप्रद है ऐसा करने से बलकान्ति एवं अस्थियों में दृढ़ता उत्पन्न होती है। एक छटाँक तैल का शरीर में रम जाना आधसेर घी के सामान होता है।

२—प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व उठना ही हितकर है परन्तु बिस्तरे पर से एकदम बयराहट के साथ न उठ बैठना चाहिये वरन् स्वस्थ चित्त हो आलस्य त्याग उठना ही श्रेयस्कर है।

३—गर्मजल से स्नान करते समय गर्मजल मस्तक पर अधिक न गेरना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से नयन दृष्टि क्षीण होती है।

४—गर्म जल में पुनः ठण्डा जल मिला कर पीना उचित नहीं।

५—नित्यप्रति स्नान करने से जठराग्नि प्रदीप्त हो वीर्य वृद्धि तथा चैतन्यता होती है व क्रोधादि दूर होते हैं।

६—स्नानोपरान्त तौलिये से शरीर खूब पाछ डालना उत्तम है क्योंकि ऐसा करने से शरीर के रामछिद्र खुल कर स्वच्छ वायु शरीर में प्रवेश कर रक्त शुद्ध करती है।

७—प्राणायाम भी नित्य करना चाहिये। इससे क्षय श्वास रोग

क्षय रुग्णी आदि भयकर रोग होने की संभावना नहीं रहती। दूसरे रक्त शुद्ध करने का सर्वोत्तम केवल यह ही एक उपाय है।

८—व्यायाम नित्य करने से शरीर गठित, सुडौल और हृष्ट पुष्ट होता है तथा कठिन से कठिन कार्य करने में उत्साह और रुचि उत्पन्न होती है।

९—क्रोधित हो भोजन करना लाभदायक नहीं और भोजन के उपरान्त तुरन्त ही शारीरिक परिश्रम भी करना उचित नहीं।

१०—भूख लगने पर पानी पीना या प्यास लगने पर भोजन करने से उदर रोग होने की आकांक्षा रहती है।

११—वस्त्र सदैव शरीर पर ढीले पहिनने चाहिये ताकि शारीरिक अवयवों के वृद्धि में बाधक न हों।

१२—मस्तक ठंडा और पैर सर्वदा गर्म रखने स्वास्थ्यप्रद हैं।

१३—प्रातःकाल तुलसी के दस पाँच पत्ते खाने से पाचन शक्ति तीव्र होती है, और ज्वरादि का भय नहीं रहता।

१४—दूध या कोई भी अन्य प्रकार की गर्म वस्तु खाने के उपरान्त तत्क्षण शीतल जल का प्रयोग न करना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से दाँतों की जड़ ढीली पड़ जाती है।

१५—भोजन करने के पश्चात् पान खाने से पाचन शक्ति तीव्र होती है।

१६—क्षौर बनवाने के पश्चात् मस्तक पर तैल की मालिश कर स्नान करना ठीक है।

१७—हाथ में पसीने आते वक्त हाथ धोकर फिर कोई वस्तु खानी उचित है क्योंकि पसीने में एक प्रकार का सूक्ष्म विष होता है।

१८—गीले हाथ नेत्रों पर फेरने से नेत्र ज्योति तीक्ष्ण होती है।

१९—मनुष्य को शौच मूत्रादि वेगों को कदापि न रोकना चाहिये।

२०—प्रातःकाल उठते ही फल खाने उचित नही वरन् भोजन के पश्चात् तीसरे पक खाने उत्तम होते हैं।

२१—भोगी सदा रोगी उद्योगी सदा निरोगी।

२२—शहद और घी बराबर मिला कर न खाना चाहिये।

२३—अग्नि और धूप में जहां तक हो सके कम बैठना स्वास्थ्य प्रद है।

२४—गीली जगह और एकत्र मनुष्य के समीप की हवा अशुद्ध हो जाती है।

२५—प्रातःकाल शीतल जल से नेत्रों को बार बार धोने से दृष्टि तीक्ष्ण होती है और नेत्र रोग भी दूर होते हैं।

२६—भोजन मुख में भली भाँति रौंध कर खाना चाहिये ऐसा करने से दांतों का काम आँतों को न करना पड़ेगा।

२७—एक दिन का दूसरे दिन भोजन यानी बासी भोजन करने से चित्त पर एक प्रकार की मलीनता व्याप्त होजाती है जो स्वास्थ्य हित हानिकर है।

२८—भोजन के पश्चात् तुरन्त शारीरिक परिश्रम करना या दौड़ना ठीक नहीं कारण ऐसा करने से भोजन आमाशय से

कभी कभी निकल कर जलाशय में पहुँच जाता है जो स्वास्थ्य हित अनिष्टकारी है।

२६—भोजन के पश्चात् यदि लकड़ी की खड़ाऊँ पहन कर धीरे २ टहला जावे तो भोजन शीघ्र पच जाता है।

३०—स्नान के पश्चात् तुरन्त भी भोजन करने से पाचन शक्ति मन्द पड़ जाती है।

३१—धूप में बैठ कर पुस्तक पढ़ने से नेत्र दृष्टि क्षीण होती है।

३२—निवास-गृह खुला रहने के अतिरिक्त उसमें मक्खी मच्छरों का साम्राज्य न रहना चाहिये क्योंकि यही जन्तु रोगों के सहायक होते हैं।

३३—छींक जमाई या मूत्रवेगादि को रोकने से यथाकश्च भयकर रोग हो जाते हैं।

३४—खड़े होकर या लेट कर पानी पीना ठीक नहीं इससे उदर रोग होने की सम्भावना रहती है।

३५—पानी पीकर तुरन्त दौड़ने से पेट में दर्द होने लगता है।

३६—लाल मिर्च या अन्य मसालों के अधिक खाने से नेत्र दृष्टि कम एक दूषित स्वभाव क्रोधी और चिड़चिड़ा हो जाता है।

३७—मुख ढक कर शयन करना या शयन गृह में मिट्टी के तेल का दीया जलाकर सो जाने से कभी कभी मृत्यु तक भी हो जाती है।

३८—कोयलों की सिगड़ी वगैहरा जला कर सोना भी दूषित है

क्योंकि कोयलों में एक प्रकार का गेस निकला करता है जो जीवका प्राण-घातक है।

३९—वर्षा ऋतु में नंगे पैर चलने फिरने से पैरों में फोड़े वगैरा हो जाने का भय रहता है।

४०—सूर्य की तरफ देखने से नेत्र दृष्टि कम और चन्द्रमा की तरफ देखने से तीव्र होती है।

४१—मैथुनोपरान्त तुरन्त खुली हवा में आजाना, शीतल जल का प्रयोग तथा मानसिक परिश्रम करना वर्जित है।

४२—शारीरिक परिश्रम या मैथुनोपरान्त गर्म दुग्ध का सेवन करना अति उत्तम है।

४३—तमाखू सिगरेट चुरट आदि अधिक पीने से हृत्पिण्ड मस्तिष्क में दुर्बलता मांसपेशियों में निर्बलता व्याप्त हो जाती है।

४४—मूली दही एक साथ खाने से मूत्ररोग, दूध और खटाई से आमाशय में दर्द मांस और मछली से कुष्ट रोग केला और दूध से हैजा, आदि रोग होने की सम्भावना रहती है।

४५—भूख के समय पाखाने से आकर या कोई शारीरिक परिश्रम के पश्चात् तुरन्त पानी पीना अहितकर है।

४६—भेड़ का दूध पथरी के लिये लाभकारी है परन्तु हृदय के लिये हानिकर है ऊटनी का दूध कृमि कुष्ट को लाभप्रद, और स्त्री का दूध नेत्रदर्द की दवा होती है।

४७—भोजन के पश्चात् या मूत्रवेग के समय स्त्री-प्रसंग करना अनुचित कर्म है।

४७—दिन के अन्त में दूध, रात के अन्त में पानी और भोजन के अन्त में मट्ठा पीना स्वास्थ्यप्रद है।

४८—पाखाने जाने के पश्चात् तुरन्त, भूख के समय, जुकाम व पसीने होने के समय पान खाना उचित नहीं।

४६—जूते, मोजे और साफा पहन कर सो जाना ठीक नहीं।

५०—शारीरिक मानसिक परिश्रम या कोई हृदय विदारक सूचना श्रवण करने के पश्चात् मनोरंजन कार्य करना लाभप्रद है। मनोरंजन कार्य करने से मस्तिष्क मलीनता दूर होने के अतिरिक्त हृदय में एक प्रकार अपूर्व आनन्द अनुभव होता है

५१—दुर्गन्धित स्थान में बैठने से क्षय जैसे भयंकर रोग हो जाते हैं क्योंकि उस स्थान की पवन दूषित हो जाती है।

२२—शयन गृह में कोयलों की सिगड़ी या मिट्टी के तेल का दीपक जला रख कर सोजाने से कभी २ मृत्यु तक हो जाती है।

५३—वस्त्र हमेशा ढीले पहनने उचित हैं क्योंकि तङ्ग और चुस्त वस्त्र हमारे शारीरिक अवयवों की वृद्धि में बाधक होते हैं।

५५—बासी भोजन को फिर दूसरी बार गर्म कर खाना हानिकर है।

५६—मिठाई का अजीर्ण नमक से, घृत का सेकने से, जल का भुने चने खाने से दूर होता सुना गया है।

५७—मनुष्य शरीर में २४ पसलियां और रीढ़ की हड्डी में २४ जोड़ होते हैं।

५८—दौर चलाते ही तुरन्त शीतल जल का प्रयोग न कर बैठो।

५६—धूप के समय किसी रोगी के पेशाब करने की जगह पर पेशाब करने से रोग हो जाते हैं।

६०—वमन करने के पश्चात उपवास करे परन्तु उपवास के उप रान्त वमन करना उचित नहीं।

६१—कुपचही सब बीमारियों की जड़ है और आमाशय की जलन से ही मस्तिष्क सम्बन्धी रोग उत्पन्न होते हैं।

६२—रोग दूर करने के पूर्व उसके कारण को दूर कर दो तो प्रकृति स्वयं तुम्हें सहायता देगी।

६३—रुधिर में आक्सजिन कम होने पर चहरे पर मलीमता आ जाती है।

६४—शराब पीने से आमाशय की रतूबत पतली हो जाती है अस्तु भोजन देर से हजम होता है।

६५—फल यदि छिलके समेत खाये जाये तो लाभदायक होते हैं।

६६—शराब से मांस नहीं बनता वरन उष्णता स्थिर रहती है।

६७—कुपच होने से नींद आने लगती है बदन का टूटना और जीभ पर सुफेदी आजाती है।

६८—अधिक भोजन खाना शक्ति वर्धक नहीं वरन् जो पचन हो जाता है वही लाभप्रद है।

६९—जो मनुष्य सदैव बारहो महीने सायंकाल या प्रातःकाल

खुली हवा में भ्रमण करते हैं तो ऐसे मनुष्य को यकायक सर्दी गर्मी लगने या क्षुकास आदि का भय नहीं रहता है।

७०—अतिसार और सग्रहणी में व्यायाम करना उचित नहीं।

७१—जिसके शरीर में जितना अधिक सुर्ख रक्त होगा उतनी ही अधिक गर्मी उसके शरीर में समझना चाहिये।

७२—पेट में यदि आलस मालुम हो और खट्टी खट्टी डकारें आयें तो एक गिलास ठडा जल पी लेना चाहिये।

७३—यदि गर्मी के कारण शिर दर्द और आखों में जलन हो तो ठडे पानी से कुछ समय तक धोना उचित है।

७४—जूते पहन कर दस पाँच कोस चलने के पश्चात् तुरन्त शीतल जल से पैर न धोने चाहिये क्योंकि ऐसा करने से कभी पैर सूज आते हैं और खुजली होने लगती है।

७५—कैंची चाकू उसतरा आदि किसी औज़ार से हाथ पैर कट जाने और रक्त प्रवाहित हो जाने पर बर्फ का टुकड़ा जखम पर बांध देना उचित है।

७६—नाक की एक ओर या होटों के ऊपर नाक के पास या कान की ओर से दबाये रहने से खाँसी शीघ्र बन्द हो जाती है।

७७—जो दर्द प्रातःकाल हुआ करता है दोनो हाथ कुछ देर ऊपर उठा कर रखने से अच्छा हो जाता है।

७८—नाक कान मलने से छींकें रुक जाती हैं।

७९—जिधर के कान में पानी पड़ गया हो उसके विरुद्ध एक पांव पर कूदने से निकल जाता है।

८०—नकसीर—फूट आये तो पीली मिट्टी गीली कर सूघना चाहिये।

८१—शारीरिक परिश्रम करने की अपेक्षा मानसिक परिश्रमियो को आराम करने की अधिक आवश्यकता है।

८२—चेचक के रोगी को सूरज की रोशनी न दिखानी चाहिये।

८३—बार बार थूकने से मुख की कान्ति फीकी पड़ जाती है।

८४—ससार के समस्त रोग और निर्बलताओं का मुख्य कारण केवल चिन्ता ही है।

८५—शारीरिक क्लान्ति प्राप्त होने पर एकान्त में बैठ कुछ समय विश्राम लो।

८६—अधिक समय से बन्द मकान में एकदम न घुसे जाओ क्योंकि अधिक समय की बन्द हवा में एक प्रकार का विष उत्पन्न हो जाता है।

८७—टेढ़ा शरीर कर छींक जमाई लेना या खासना उचित नहीं।

८८—मनुष्य की १ वर्ष की उमर में नाड़ी एक सौ तीस से एक सौ पन्द्रह बार, दो वर्ष से सात वर्ष की आयु तक तक एक सौ से नब्बे तक, चौदहे वर्ष तक पच्यासी से पचेतर तक, इक्कीस से पैंसठ वर्ष की आयु में पच्यासी और सत्तर के मध्यस्त दशा हो जाती है, और ज्यो २ वृद्धा अवस्था होती जाती है त्यों २ नाडी में भी स्वयं शिथिलता होती जाती है।

८९—गर्म पत्थर रेत या अन्य किसी भी वस्तु पर चाहे वह धूप से और चाहे अग्नि से होगया हो उस पर पेशाब न

खुली हवा में भ्रमण करते हैं तो ऐसे मनुष्य को यकायक सर्दी गर्मी लगने या लु कोस आदि का भय नहीं रहता है।

७०—अतिसार और संग्रहणी में व्यायाम करना उचित नहीं।

७१—जिसके शरीर में जितना अधिक सुर्ख रक्त होगा उतनी ही अधिक गर्मी उसके शरीर में समझना चाहिये।

७२—पेट में यदि आलस मालुम हो और खट्टी खट्टी डकारें आयें तो एक गिलास ठंडा जल पी लेना चाहिये।

७३—यदि गर्मी के कारण शिर दर्द और आखों में जलन हो तो ठंडे पानी से कुछ समय तक धोना उचित है।

७४—जूते पहन कर दस पाँच कोस चलने के पश्चात् तुरन्त शीतल जल से पैर न धोने चाहिये क्योंकि ऐसा करने से कभी पैर सूज जाते हैं और खुजली होने लगती है।

७५—कैंची चाकू उस्तरा आदि किसी औज़ार से हाथ पैर कट जाने और रक्त प्रवाहित हो जाने पर बर्फ का टुकड़ा ज़ख्म पर बांध देना उचित है।

७६—नाक की एक ओर या होठों के ऊपर नाक के पास या कान को जोर से दबायें रहने से खाँसी शीघ्र बन्द हो जाती है।

७७—जो दर्द प्रातःकाल हुआ करता है दोनो हाथ कुछ देर ऊपर उठा कर रखने से अच्छा हो जाता है।

७८—नाक कान मलने से छींकें रुक जाती हैं।

७९—जिधर के कान में पानी पड़ गया हो उसके विरुद्ध एक पाँव-पर कूदने से निकल जाता है।

८०—नकसीर—फूट जाये तो पीली मिट्टी गीली कर सूघना चाहिये।

८१—शारीरिक परिश्रम करने की अपेक्षा मानसिक परिश्रमियों को आराम करने की अधिक आवश्यकता है।

८२—चेचक के रोगी को सूरज की रोशनी न दिखानी चाहिये।

८३—बार बार थूकने से मुख की कान्ति फीकी पड़ जाती है।

८४—संसार के समस्त रोग और निर्बलताओं का मुख्य कारण केवल चिन्ता ही है।

८५—शारीरिक क्लान्ति प्राप्त होने पर एकान्त में बैठ कुछ समय विश्राम लो।

८६—अधिक समय से बन्द मकान में एकदम न घुसे जाओ क्योंकि अधिक समय की बन्द हवा में एक प्रकार का विष उत्पन्न हो जाता है।

८७—टेढ़ा शरीर कर छींक जमाई लेना या खासना उचित नहीं।

८८—मनुष्य की १ वर्ष की उमर में नाड़ी एक सौ तीस से एक सौ पन्द्रह बार, दो वर्ष से सात वर्ष की आयु तक तक एक सौ से नब्बे तक, चौदहे वर्ष तक पच्यासी से पचेत्तर तक, इक्कीस से पैंसठ वर्ष की आयु में पच्यासी और सत्तर के मध्यगत दशा हो जाती है, और ज्यों २ वृद्धा वस्था होती आती है त्यों २ नाड़ी में भी स्वय शिथिलता होती जाती है।

८६—गर्म पत्थर रेत या अन्य किसी भी वस्तु पर चाह वह धूप से और चाहे अग्नि से होगया हो उस पर पेशाब —

खुली हवा में भ्रमण करते हैं तो ऐसे मनुष्य को यकायक सर्दी गर्मी लगने या जुकाम आदि का भय नहीं रहता है।

७०—अतिसार और संग्रहणी में व्यायाम करना उचित नहीं।

७१—जिसके शरीर में जितना अधिक सुर्ख रक्त होगा उतनी ही अधिक गर्मी उसके शरीर में समझना चाहिये।

७२—पेट में यदि आलस मालुम हो और खट्टी खट्टी डकारें आवें तो एक गिलास ठंडा जल पी लेना चाहिये।

७३—यदि गर्मी के कारण शिर दर्द और आखों में जलन हो तो ठंडे पानी से कुछ समय तक धोना उचित है।

७४—जूते पहन कर दस पाँच कोस चलने के पश्चात् तुरन्त शीतल जल से पैर न धोने चाहिये क्योंकि ऐसा करने से कभी पैर सूज जाते हैं और खुजली होने लगती है।

७५—कैंची चाकू उसतरा आदि किसी औजार से हाथ पैर कट जाने और रक्त प्रवाहित हो जाने पर बर्फ का टुकड़ा जख्म पर बांध देना उचित है।

७६—नाक की एक ओर या होंठों के ऊपर नाक के पास या कान को जोर से दबायें रहने से खाँसी शीघ्र बन्द हो जाती है।

७७—जो दर्द प्रातःकाल हुआ करता है दोनो हाथ कुछ देर ऊपर उठा कर रखने से अच्छा हो जाता है।

७८—नाक कान मलने से छींकें रुक जाती हैं।

७९—जिधर के कान में पानी पड़ गया हो उसके विरुद्ध एक पांव पर कूदने से निकल जाता है।

८०—नकसीर—फूट आये तो पीली मिट्टी गीली कर सूंघना चाहिये।

८१—शारीरिक परिश्रम करने की अपेक्षा मानसिक परिश्रमियों को आराम करने की अधिक आवश्यकता है।

८२—चेचक के रोगी को सूरज की रोशनी न दिखानी चाहिये।

८३—बार बार थूकने से मुख की कान्ति फीकी पड़ जाती है।

८४—संसार के समस्त रोग और निर्बलताओं का मुख्य कारण केवल चिन्ता ही है।

८५—शारीरिक क्लान्ति प्राप्त होने पर एकान्त में बैठ कुछ समय विश्राम लो।

८६—अधिक समय से बन्द मकान में एकदम न घुसे आओ क्योंकि अधिक समय की बन्द हवा में एक प्रकार का विष उत्पन्न हो जाता है।

८७—टेढ़ा शरीर कर छींक जमाई लेना या खांसना उचित नहीं।

८८—मनुष्य की १ वर्ष की उमर में नाड़ी एक सौ तीस से एक सौ पन्द्रह बार, दो वर्ष से सात वर्ष की आयु तक तक एक सौ से नब्बे तक, चौदहे वर्ष तक पच्यासी से पचेतर तक, इक्कीस से वैसठ वर्ष की आयु में पच्यासी और सत्तर के मध्यवत दशा हो जाती है, और ज्यों २ वृद्धा अवस्था होती आती है त्यों २ नाड़ी में भी स्वयं शिथिल ता होती जाती है।

८९—गर्म पत्थर रेत या अन्य किसी भी वस्तु पर वह धूप से और चाहे अग्नि हो उस पर

मल त्याग करने से नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

९०—गर्मी सूज़ाक आदि रोगों के रोगी के पेशाब पर पेशाब करने से भी वही रोग होने सम्भव हैं जो पेशाब करने वाले के हों और यह दशा झूठा पानी पीने या एक साथ भोजन करने से भी हो जाती है।

९१—भोजन करने के पश्चात् तुरन्त ही अग्नि के सम्मुख न बैठ जाओ चाहें शीत ऋतु ही क्यों न हो।

९२—मस्तक पर अधिक बोझ न रखो।

९३—आँखों में हरड़ दांतों में नोन, भूखा राखे चौथा कौन। ताजा खावे बाये सोवे, उसका रोग घर २ रोवे।

९४—कांसे और तांबे के बर्तन में कुछ समय रखा हुआ घी दही खाना हानि कारक होता है।

९५—रात के समय एकदम जाग कर पानी पीने से नजला परिश्रम के पश्चात् पसीनों में पीने से ज़ुखाम खासी और फल भक्षण के पश्चात् पानी पीना हितकर नहीं होता है।

९६—भोजन खाते समय यदि तुम्हें उसमें विष मिलने का सन्देह हो तो उसकी निम्नांकित परीक्षा कर सन्देह निवार्ण्य कर लो। विषयुक्त भोजन अग्नि पर गेरने से चट चटाने लगेगा या नीले रंग की ज्योति निकलने लगेगी जीभ में जलन और कड़ापन आ जायगा।

पतले पदार्थ जैसे दूध पानी शराब आदि के हिलाने से यदि उन में विष होगा तो झाग देने लगेगा।

९७—भोजन के पूर्व मीठे मध्य में खाइये और अन्त में चर परे व तीक्ष्ण पदार्थ खाने लाभ प्रद हैं।

९८—भोजन के अन्त में दूध पीना उचित है परन्तु दूध के अन्त में पान खाना ठीक नहीं।

९९—भोजन के पूर्व या अन्त में नमक और अदरक मिला कर खाना पाचन शक्ति को तीव्र करता है।

१००—मन्दाग्नि वाले को गाय के दूध के झाग और सग्रहणी वाले को गाय का दूध पीना उचित है।

१०१—नकसीर टूटने पर रोगी के दो हाथ ऊपर को उठा कर मुख व गर्दन पर शीतल के छीटें देना या पीली मिट्टी भिगो कर सूँघना लाभ दायक है।

१०२—बेहोश मनुष्य को नौसादर नमक या चूना मिला कर सुघाने से होश आ जाता है।

१०३—कोई मादक वस्तु व्यवहार करने से यदि बेहोशी हो तो रोगी के मुख पर शीतल जल के छींटे मस्तक कपाल पर जल पटके और पानी में नमक घोल कर पिला दे।

१०४—विष खाजाने पर मनुष्य को उचित है कि तुरन्त कोई राई जैसी वमनकारक वस्तु खालें। सो न जावे वरन् बातें करता रहे यदि निद्रा आने लगे तो शीतल जल के छीटे दे।

१०५—फल भक्षण तथा घी के पश्चात् तुरन्त जल पीना हित कर नहीं।

